Con. 3.5.6.47
750

अंक 5
संख्या 6

सोमवार
25 अगस्त,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

		पृष्ठ
1.	रजिस्टर पर हस्ताक्षर करना	1
2.	शपथ ग्रहण करना	1
3.	बर्मा विधान-परिषद् का संदेश	1
4.	कार्यक्रम के संबंध में अध्यक्ष की घोषणा	1
5.	पश्चिमी पंजाब की दुर्घटनाओं के प्रति सहानुभूति	3
6.	संघ अधिकार समिति की रिपोर्ट—जारी	5

भारतीय विधान-परिषद्

सोमवार, 25 अगस्त, सन् 1947 ई॰

माननीय डा॰ राजेन्द्र प्रसाद जी की अध्यक्षता में भारतीय विधान-परिषद् की बैठक कान्स्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातःकाल दस बजे आरम्भ हुई।

रजिस्टर पर हस्ताक्षर करना

निम्न सदस्य ने रजिस्टर में अपने हस्ताक्षर किये:

श्री सैयद अब्दुल रऊफ।

शपथ ग्रहण करना

निम्न सदस्यों ने शपथ ग्रहण की:

श्री काला वैंकटा राव।

मि॰ सैयद अब्दुल रऊफ।

माननीय श्री बृजलाल नन्दलाल बियाणी।

बर्मा विधान-परिषद् का संदेश

***अध्यक्ष:** हमने बर्मा विधान-परिषद् के प्रधान को जो संदेश भेजा था उसके उत्तर में मुझे उनका एक पत्र मिला है। पत्र इस प्रकार है:

''जनरल आंगसांन और उनके साथियों की हत्या से बर्मा को जो हानि हुई है उस पर समवेदना तथा सहानुभूति सूचक आपके संदेश के लिये बर्मा विधान-परिषद् की ओर से मैं स्वयं धन्यवाद देता हूं। बर्मी राष्ट्र उस स्वतंत्रता का अवश्य ही शांतिपूर्वक उपयोग करेगा जिसे इन स्वर्गवासी वीरों ने बर्मा के लिये प्राप्त किया था। आपके सहानुभूति संदेश के प्रति हमारे सम्मान की सूचना अपनी विधान-परिषद् के समस्त सदस्यों को कृपाकर दीजिये। आपके समवेदना सूचक संदेश की सूचना दुखी परिवारों को मैं पहुंचा दूंगा।

कार्यक्रम के संबंध में अध्यक्ष की घोषणा

***अध्यक्ष:** सूची के शेष मदों पर विचार के विषय को लेने के पूर्व मैं इस

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[अध्यक्ष]

अधिवेशन के कार्यक्रम के संबंध में कुछ घोषणा करूंगा। मैंने ऐसा ही एक दिन और कहा था कि हम यथासंभव शीघ्र ही संघ अधिकार समिति की रिपोर्ट पर विचार समाप्त करने का प्रयत्न करें। अब तक की हमारी प्रगति बड़ी धीमी है, मैं संघ अधिकार समिति की रिपोर्ट पर विचार करने के लिये आज और कल के समय का प्रस्ताव रखता हूं और बुधवार से हम अल्पसंख्यकों तथा मौलिक अधिकारों से संबंधित परामर्शदातृ की रिपोर्ट आरंभ करेंगे, और मेरे ख्याल से वह बुधवार तथा बृहस्पतिवार ले लेगी। शुक्रवार, उस कमेटी की रिपोर्ट पर विचार करने के लिये नियत किया जायेगा जिसको हमने यह सुझाव रखने के लिये नियुक्त किया था कि इस परिषद् के विधान-परिषद् तथा व्यवस्थापिका के कार्यों के संबंध में क्या कदम उठाया जाये। इस प्रकार मैं आशा करता हूं कि हम इस अधिवेशन के कार्य को अधिक से अधिक 31 तारीख तक समाप्त कर सकेंगे। यदि आवश्यकता हुई तो मैं प्रस्ताव रखता हूं कि हम दोपहर बाद सम्मिलित हों और यदि और भी आवश्यकता हुई तो रात्रि में अधिवेशन करें। हमें इतने अधिक कार्य करने हैं कि इस अधिवेशन को इस माह से आगे ले जाना संभव नहीं है, इसलिये मैं जितना शीघ्र हो सके उतना ही शीघ्र इस कार्य को समाप्त करने के लिये चिन्तित हूं। अब मैं यह प्रस्ताव उपस्थित कर रहा हूं कि इस सूची के विषयों पर विचार स्थगित किया जाये और इस काल में परामर्शदातृ समिति की रिपोर्ट पर विचार किया जाये। जहां तक मस्विदा तैयार करने का प्रश्न है वह बहुत कुछ उन विचारों पर निर्भर है जिनको यह परिषद् मौलिक अधिकार संबंधी परामर्शदातृ समिति की रिपोर्ट में सम्मिलित विषयों पर निश्चित करती है। लेकिन जहां तक केवल सूची का संबंध है, अधिक मस्विदा तैयार करने की आवश्यकता नहीं है और चाहे परिषद् कुछ विषयों को स्वीकार करे अथवा अस्वीकार, इस परिवर्तन को जब कि रिपोर्ट का मस्विदा तैयार किया जायेगा, शामिल करना सरल होगा। इसलिये मैं इस परिषद् के उस कार्य के समाप्त करने के लिये उत्सुक हूं जो कि मस्विदा तैयार करने के अभिप्राय से आवश्यक है। मैं चाहता हूं कि मस्विदा यथासंभव शीघ्र तैयार कर दिया जाये और इसके लिये एक मस्विदा तैयार करने वाली समिति की नियुक्ति करनी होगी जिसे हम अधिवेशन के आखिरी दिन नियुक्त कर देंगे। एक और कुछ काम है जो थोड़ा सा समय लेगा। स्वर्गीय प्रभा शंकर पट्टानी ने इंग्लैंड के प्रसिद्ध कलाकार श्री ओस्वाल्ड वर्वी द्वारा बनाया हुआ चित्र राष्ट्र को अर्पण किया था। उसे उनके पुत्र ने, जो कि इस सभा के सदस्य हैं, भेंट किया है। सदस्यगण अवश्य इस भेंट की प्रशंसा करेंगे और यह चाहेंगे कि उस चित्र को इस परिषद् में किसी उपयुक्त स्थान पर रख दिया जाये। इस कार्य के लिये इन्हीं दिनों में से किसी दिन हमें कुछ समय की आवश्यकता होगी जिसे

मैं उस कार्य के लिये नियुक्त कर दूंगा। मैं उस दिवस की घोषणा कर दूंगा। संभव है अगले शुक्रवार को यह हो, लेकिन निश्चित रूप से मैं इसे बाद में नियत करूंगा।

***मि. तजम्मुल हुसैन** (बिहार: मुस्लिम): श्रीमान् जी, आपने हमें यह तो बता दिया कि यह अधिवेशन शायद इस माह के अंत तक समाप्त हो जायेगा, लेकिन आपने यह नहीं बताया कि अगला अधिवेशन कब आरम्भ होगा।

पश्चिमी पंजाब की दुर्घटनाओं के प्रति सहानुभूति

श्री अलगुराय शास्त्री (संयुक्त प्रांत: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं कुछ कहना चाहता हूं। इससे पहले कि आज का कार्यक्रम प्रारम्भ किया जाये मैं आपका ध्यान इस बात की ओर दिलाना चाहता हूं कि पश्चिमी पंजाब में जो दुर्घटनायें घट रही हैं, जिस तरह से वहां हत्याएं हो रही हैं और जिस तरह से लोग मारे-काटे जा रहे हैं, उन दुखियों के प्रति सहानुभूति प्रकट करने के लिये हमारी आज की कार्यवाही पन्द्रह मिनट के लिये स्थगित की जाये। यह अच्छा नहीं मालूम होता कि हम अपना विधान बनाने का कार्यक्रम जारी रखते जायें और जो घटनायें घट रही हैं, उनकी तरफ हमारा ध्यान न जाये! मैं यह अनुभव करता हूं और कई दिन से इस बात को उपस्थित करने की टोह में था लेकिन यह सोचकर कि डोमिनियन पार्लियामेंट के रूप में यह असैम्बली बैठे तब इसके लिये अच्छा अवसर होगा, यह सोचकर रुक गया था। लेकिन जब उस दिन झंडे का प्रश्न लेकर हमारे कुछ साथियों ने आपका ध्यान दिलाया तो आपने लीडर आफ हाउस को इस बात की आज्ञा दी कि वह यहां पर कुछ बयान दें। मैं समझता हूं कि ऐसे प्रश्न हमारे सामने आ सकते हैं जिनको दृष्टि में रखकर हम अपने कार्यक्रम को थोड़ी देर के लिये स्थगित कर दें और यह अनुचित न होगा। विधान-परिषद् एक जनतंत्र और स्वतंत्र बाड़ी है अपने कुल कामों पर पूरी खुदमुख्तार जमात है। इसलिये, जो घटनायें आज देश के एक हिस्से में घट रही हैं जहां अबोध बच्चों, अबलाओं का कत्लेआम हुआ और लोगों को स्टेशनों पर गाड़ी रोककर मारा गया। इन पिछले दिनों ऐसी रोमांचकारी घटनायें हुई हैं जिनका कि उदाहरण भारत के बर्बर युग के इतिहास में शायद ही मिलता हो।

अब, जब कि प्रजातंत्र शासन की स्थापना हुई है ऐसे समय इस प्रकार की घटनाओं का होना काफी चिंताजनक है। यदि हम अपना विधान बनाने के कार्य में लगे रहे और उन बातों की तरफ ध्यान नहीं दिया तो आने वाली सन्तानें कहेंगी कि रोम जल रहा था और नीरो बंसी बजा रहा था। लाहौर और दूसरे इलाके जल रहे थे, लोग मारे जा रहे थे, और हम अपना विधान बनाने के कार्य में संलग्न रहे, ऐसा आरोप हमारे ऊपर लगाने का अवसर न दिया जाये। हमारे अन्दर

[श्री अलगूराय शास्त्री]

जो मानवता है, वह कुंठित हो जायेगी यदि हम उन असहाय लोगों के प्रति अपनी हार्दिक सहानुभूति प्रकट न करें जिनकी लाखों, करोड़ों की सम्पत्ति लुट गयी और जो अपनी सम्पत्ति और घरों की जो कि पंजाब में पड़ी है, रक्षा के लिये आतुर हैं। भागते हुए लोगों को पकड़कर मौत के घाट उतारा जा रहा है। आदमियों की इस प्रकार हत्या की जा रही है कि जैसे घास काटने वाला हथियार घास काटता है, उसी प्रकार इन्सानों का सिर काटा जा रहा है। कितनी लज्जाजनक बात है। पंद्रह तारीख के बाद से हमारी डोमिनियन पार्लियामेंट भी है। हमारे हृदयों में जो आवाज है, क्षोभ है, चिंता है, और लज्जा है कि हम इतने असमर्थ हैं कि उन असहाय बच्चों, बालकों, बूढ़ों और अबलाओं की रक्षा नहीं कर सकते। यह एक ऐसी असहाय अवस्था है, ऐसी दीन अवस्था है, जिस पर हमें लज्जा और ग्लानि है। आज यदि होम मेम्बर महोदय, लीडर आफ दी हाउस या डिफेंस मेम्बर कोई इस संबंध में बयान देते तो और बात थी। इसलिये मैं प्रस्ताव करता हूं कि कोई कार्यवाही प्रारम्भ करने के पहले हम मरे हुए आदमियों के प्रति तथा उनके परिवार से बचे हुए लोगों के प्रति सहानुभूति प्रकट करने के लिये इसकी कार्यवाही स्थगित की जाये। मैं समझता हूं कि इस पर एतराज हो सकता है लेकिन हमने देखा कि नेता लोगों की गिरफ्तारी पर हमारी कार्य-परिषद् की कार्यवाही स्थगित होती थी। जब पिछले कारणों से हम कार्यक्रम को स्थगित करने का प्रस्ताव कर सकते हैं तो आज ऐसा करने में कोई दिक्कत न होनी चाहिए। मौलाना हसरत मोहानी ने तो सुझाव पेश किया कि इस पर विचार ही न किया जाये। कार्यक्रम को थोड़ी देर तक स्थगित करने का हमें पूरा वैधानिक अधिकार होना चाहिये और मैं आशा करता हूं कि हाउस अपनी कार्यवाही को थोड़ी देर के लिये, कम से कम 15 निमट के लिये स्थगित कर देगा।

अध्यक्षः इस वक्त जो कुछ कार्यवाहियां हो रही हैं और जिनकी वजह से जितने कत्ल हो रहे हैं, इतनी लूट-मार, घरों का जलाना और जो कुछ बरबादी हो रही है, इसमें कोई शक नहीं कि कोई हिंदुस्तानी ऐसा नहीं होगा जिसका कि दिल बहुत न दुखा हो और जिसको कि बहुत रंज न हो। अब सवाल इतना है कि हम यहां इस असेम्बली में बैठकर क्या कर सकते हैं और क्या नहीं कर सकते हैं। जो कुछ इसके मुत्तालिक हो सकता है, आप विश्वास रखें कि आपकी गवर्नमेंट जो कार्य कर रही है, भरसक प्रयत्न करेगी और आपके प्राइम-मिनिस्टर खुद उन जगहों का दौरा कर रहे हैं और इसी कारण वह इस समय यहां उपस्थित नहीं हैं, तो इसमें कुछ शक नहीं है कि जो मुसीबत इस वक्त बहुत से लोगों

पर गुजर रही है, उससे हमारी पूरी हमदर्दी है और हम जहां तक हो सकता है इसको करेंगे और इससे बाज न आयेंगे। इस वक्त अगर हाउस के सब लोगों की ख्वाहिश हो तो इसमें कोई शक नहीं कि हम अपनी हमदर्दी, जो इस मुसीबत में मुब्तिला हैं और जिन्हें यह सब तकलीफें भुगतनी पड़ रही हैं, उन सबके लिये हम खड़े होकर अपनी तरफ से दु:ख जाहिर करें और हमदर्दी जाहिर करें। अगर सबकी राय हो तो मैं आशा करता हूं कि इतना काफी होना चाहिये कि हम सब उठकर अपनी हमदर्दी उन लोगों के साथ जो मुसीबत में मुब्तिला हैं, प्रकट करें और उन आदमियों के प्रति श्रद्धांजलि भेंट करें जो इन मुसीबतों में फंसकर दुनिया से गुजर गये हैं।

एक ऐसा सुझाव उपस्थित किया गया है कि यह सभा 15 मिनट तक स्थगित होकर उन लोगों के प्रति सहानुभूति प्रकट करे जिनको उन बलवों में हानि हुई है, जो देश में हो रहे हैं। मैंने यह सुझाव रखा है कि परिषद् के कार्य को स्थगित करने के अतिरिक्त हम सब अपने-अपने स्थानों पर खड़े हों और उन दुखियों के प्रति हार्दिक सहानुभूति प्रकट करें। इस बात में मतभेद हो ही नहीं सकता कि जो बलवे हो रहे हैं वे राष्ट्र के दृष्टिकोण से बड़े अपमानसूचक हैं और जो घटनायें हो रही हैं वे ऐसी हैं कि किसी भी देशभक्त के हृदय को दु:खी कर सकती हैं। इसीलिये मैंने सदस्यों से अपने-अपने स्थानों पर खड़े होने तथा दु:खियों के प्रति अपनी सहानुभूति प्रकट करने के लिये निवेदन किया है। मैंने यह भी बता दिया कि जहां तक सरकार का संबंध है, प्रधानमंत्री हवाई जहाज द्वारा उस स्थान पर गये हुये हैं और आज यहां उपस्थित नहीं हैं। वे वहां गये हुये हैं और दु:खियों को सहायता देने के लिये जो कुछ भी किया जा सकता है वे कर रहे हैं और जो घटनायें वहां हो रही हैं, उनका अंत करने का प्रयत्न कर रहे हैं।

(सदस्य अपने-अपने स्थान पर खड़े हुये और एक मिनट तक शांत रहे।)

अब हम वाद-विवाद को लेंगे।

संघ अधिकार समिति की रिपोर्ट....जारी

***डाक्टर पी०एस० देशमुख** (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): श्रीमान् जी, यदि हम कार्यक्रम में, जो आप घोषित कर चुके हैं, परिवर्तन कर सकते हैं तो मैं आपके विचारार्थ एक सुझाव रखना चाहता हूं। यह स्पष्ट है कि हम संघ-अधिकार कमेटी की रिपोर्ट पर विचार समाप्त नहीं कर सकते हैं। इस बात को लेते हुए कि हम कुछ मदों को ही और ले सकते हैं, मेरे विचार से हमारे लिये यह अच्छा होगा कि यदि आप अल्पसंख्यकों संबंधी कमेटी की रिपोर्ट के लिये कल

[डा. पी.एस. देशमुख]

का दिन और नियत कर दें और जो आपने कमेटी नियुक्त की थी उसके लिये इस प्रकार एक दिन और रखें। मेरा विचार यह है कि इन दोनों कामों के किये बगैर हमको स्थगित नहीं करना चाहिये। सर्वप्रथम तो हमें अल्पसंख्यक अधिकार समिति की रिपोर्ट पर विचार समाप्त करना चाहिये और फिर संघ-व्यवस्थापिका होने के नाते पश्चिमी पंजाब की स्थिति पर वाद-विवाद करने का अवसर प्राप्त किये बिना हमें नहीं जाना चाहिये। मैं चाहूंगा कि आप इन दो बातों पर विचार करें। यदि आप मेरे सुझाव को मंजूर करें तो हम अल्पसंख्यकों संबंधी उपसमिति की रिपोर्ट पर अच्छी तरह से विचार समाप्त कर सकेंगे और फिर पश्चिमी पंजाब और पूर्वी पंजाब के भी घोर नारकीय दृश्यों पर व्यवस्थापिका के रूप में वाद-विवाद करने के लिये दो दिन के लिये सम्मिलित हो सकेंगे। श्रीमान् जी, हमें यह पूर्ण विश्वास है कि हमारी सरकार अपना भरसक प्रयत्न कर रही है और हमें इसमें संदेह नहीं है कि जो कुछ भी हो सकता है, वह किया जा रहा है, फिर भी क्योंकि हमने व्यवस्थापिका का रूप धारण कर लिया है हममें से प्रत्येक पर उन लाखों व्यक्तियों का उत्तरदायित्व है जिनके हम प्रतिनिधि हैं। इस कारण जो घटनायें वहां वास्तव में हो रही हैं तथा हमने कहां तक अपने कर्तव्य का पालन किया है, इन बातों को हमें जानना चाहिये, संसार को जानना चाहिये और भारत को जानना चाहिये। इस दृष्टिकोण से श्रीमान् जी, मैं ख्याल करता हूं कि आपको मेरा सुझाव मान लेना चाहिये जिससे कि कमेटी की रिपोर्ट पर विवाद करने के लिये हमें एक दिन और मिल जाये, या यदि संभव हो सके तो इसी वर्तमान अधिवेशन में संघ-व्यवस्थापिका के रूप में, चाहे कुछ घंटों के लिये ही हो, हम बैठ सकें।

***अध्यक्ष:** बैठकों के कार्यक्रम पर हम और अधिक समय व्यतीत न करें। मैंने परसों नियत किया है जिससे सदस्यों को अल्पसंख्यकों तथा मौलिक अधिकारों पर सोच-विचार करने के लिये जितना समय वे चाहते हैं उतना मिल सके। मैंने परसों इसलिये नियत किया है कि सदस्यों को संशोधनों के वाद-विवाद के लिये प्रस्तुत होने के पूर्व उन संशोधनों को भेजने का समय मिल सके। परिषद् का व्यवस्थापिका के रूप में बैठक करने का प्रश्न उप-समिति की रिपोर्ट प्राप्त होने के पश्चात् ही तय किया जा सकता है। हमको उसकी रिपोर्ट की प्रतीक्षा करनी होगी।

परिषद् अब संघ-अधिकार समिति की रिपोर्ट पर विचार-विमर्श करेगी।

श्री सिधवा मद 8 संबंधी अपने संशोधनों पर भाषण देंगे।

***श्री आर०के० सिधवा** (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): गत शुक्रवार को छावनी के अधिकारों के संबंध में जबकि मैं मद 8 पर अपना संशोधन पेश कर रहा था, मैंने कहा था कि भारत में कई स्थलों पर ऐसी छोटी-बड़ी छावनियां हैं जो कि 8 से 9 मील तक के घेरे में हैं। जहां तक सेना का प्रश्न है, वे बारकों में रखी जाती हैं और जाब्ता छावनी या छावनी एक्ट द्वारा अनुशासित की जाती हैं। इन सेनाओं को समस्त सुविधाएं दी जाती हैं। इस पर मेरी कोई आपत्ति नहीं है। सेनाओं को समस्त सुविधाएं जैसे पर्याप्त जल, उचित नालियों की व्यवस्था, चिकित्सालय संबंधी सहूलियतें इत्यादि मिलनी चाहियें। उनके मनोविनोद के लिये नाटक घर तथा चल-चित्रालय (सिनेमा) भी हैं। इसके अतिरिक्त उनके अपने भोजनालय तथा कैन्टीन और दुकानें हैं जिनसे वे अपनी अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकते हैं। जहां तक सेनाओं की सुविधाओं का प्रश्न है, हम इन प्रबंधों में कोई भी परिवर्तन करना नहीं चाहते हैं। हम तो चाहते हैं कि सेनाओं की अच्छी देखभाल रखी जाये और जिस क्षेत्र में वे रहते हैं वहां उन्हें संतुष्ट रखा जाये। जो कुछ हम चाहते हैं वह यह है, इन क्षेत्रों से, जहां कि सेनाएं रखी जाती हैं, दो मील के अंदर नागरिकों की आबादी भी है। यदि सभा थोड़ी देर के लिये भी मेरे साथ सहानुभूति रखे तो मैं यह कहना चाहूंगा कि इन नागरिकों को समस्त अधिकार तथा विशेषाधिकारों से वंचित रखा जाता है। जिनका कि अन्य नागरिक उपभोग करते हैं। हम यह नहीं चाहते हैं कि इन नागरिकों को वे सुविधायें मिलें जिनका सैनिक उपभोग करते हैं। परन्तु मैं विनय करता हूं कि कम से कम कुछ प्राणी मात्र संबंधी सुविधायें इन नागरिकों को भी दी जायें। मेरे विचार में पीने के लिये जल, नाली, चिकित्सालय के प्रबंध तथा बिजली की रोशनी संबंधी व्यवस्थायें हैं।

दूसरी बात यह है कि इन क्षेत्रों को गंभीर विचार किये बिना आरंभ में अव्यवस्थित ढंग से पसंद किया गया। इनका इस प्रकार प्रबंध किया गया है कि सड़क के एक ओर सिविल सरकार कार्य कर रही है और दूसरी ओर फौजी सरकार। इस बात ने असंतोष तथा असुविधायें उत्पन्न की हैं जिनका समाचार-पत्र सम्मेलनों तथा प्रांतीय और केन्द्रीय सरकार के मध्य पत्र-व्यवहार में प्रकाशन किया गया है। असंतोष के कारणों को दूर करने के लिये कुछ भी नहीं किया गया। नागरिक जनता को सुविधायें देने की व्यवस्था के संबंध में फौजी अधिकारियों ने कोई सहानुभूति नहीं दिखाई।

इन प्रश्नों को जब इस समय उठाया जाता है तो यह तर्क उपस्थित किया जा सकता है कि अब हम अपनी सरकार चला रहे हैं और इन विषयों पर अब

[श्री आर.के. सिधवा]

हमारा भिन्न दृष्टिकोण होना चाहिये। हमें यह भी बताया जाता है कि हम अब भी दीन-हीन अवस्था में परिश्रम कर रहे हैं। ऐसे तर्कों का उत्तर दिया जा सकता है कि जन-प्रिय सरकार होने के कारण पुराने भारतीय सरकार के एक्ट प्रचलित रखे जा सकते हैं और नये विधान बनाने के झंझट में नहीं पड़ना है। यह स्मरण रखना चाहिये कि इस प्रश्न में एक सिद्धांत का समावेश है कि छावनी में नागरिक जनता को वही अधिकार होने चाहियें जो कि उन्हें अन्यत्र प्राप्त हैं। भविष्य में उनको मत प्रदान करने तथा अपनी शिकायतों को दूर करने का अवसर प्राप्त करने से वंचित नहीं रखा जाना चाहिये।

छावनी कमेटी में चन्द नामजद सदस्य होते हैं और नागरिक जनता का प्रतिनिधित्व करने के लिये और भी कम सदस्य होते हैं। श्रीमान् जी, यह अनुचित है कि जिन अधिकारों तथा विशेषाधिकारों का विज्ञापित क्षेत्रों (Notified Areas) की नागरिक जनता तक उपभोग करे और छावनी क्षेत्रों के नागरिक उनसे वंचित रखे जायें। यह अधिकार का विषय है, अतः मेरे संशोधन का आशय है कि जहां-जहां सेनायें हैं वहां छावनी कमेटी शासन करे, लेकिन जहां नागरिक जनता है, उन स्थानों को म्यूनिसिपल कमेटी के शासन में होना चाहिये जिससे कि नागरिकों को वही अधिकार प्राप्त हों जिनका उपभोग अन्य नागरिक करते हैं। मैं आपको यह भी बता दूं कि कभी-कभी जब कि इन क्षेत्रों के मनुष्य रोगग्रस्त हो जाते हैं तो उनको वह चिकित्सा की सहायता भी नहीं मिलती जो म्यूनिसिपल क्षेत्र में रहने वाले लोगों को मिलती है, क्योंकि वर्तमान एक्ट के अनुसार जो व्यक्ति म्यूनिसिपल सीमा से बाहर रहता है उसे म्यूनिसिपल क्षेत्र के अन्तर्गत लाभप्रद साधनों के प्रयोग करने का अधिकार नहीं है।

दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इस क्षेत्र का एक बड़ा भाग तथा भूमि एक विशेष वर्ग के लोगों को लगभग मुफ्त ही दे दी गयी है। मैं यह कहूंगा कि यदि वह भूमि बेची जाये तो करोड़ों रुपयों की आमदनी होगी। ये जमीन दो हजार से लेकर पचास हजार वर्ग गज तक नाममात्र की 500 या 1,000 रुपये की कीमत में दे दी गयी हैं। इन जमीनों पर जायदादें बना ली गई हैं जो कुछ मनुष्यों द्वारा आबाद की गईं और फिर उनका क्रय-विक्रय हुआ और उस वर्ग के मनुष्यों ने मनों रुपया पैदा किया। वह राज्य की भूमि है। प्रांतीय सरकार इस भूमि से वंचित है। केन्द्रीय सरकार भी इस मूल्यवान भूमि से वंचित है। और समस्त लाभोपयोग एक वर्ग के मनुष्यों ने किया। श्रीमान् जी, यहां मैं आपको यह बता दूं कि एक स्थान में 80 प्रतिशत जायदाद एक ही व्यक्ति की है।

***अध्यक्षः** मैं हस्तक्षेप करना नहीं चाहता, हम छावनियों के कुप्रबंध पर वाद विवाद नहीं कर रहे हैं। हम सूची के विशेष मद पर वाद-विवाद कर रहे हैं कि संघीय शासन की सूची में उसे रखा जाये या नहीं। अतः आपको छावनियों के कुप्रबंध तथा कुशासन के समूचे प्रश्न को यहां लेने की जरूरत नहीं है।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर** (मद्रासः जनरल): यदि आप कृपया मुझे कुछ शब्द कहने की आज्ञा दें तो मैं आशा करता हूं कि श्री सिधवा अपना भाषण आगे नहीं बढ़ायेंगे। मैं केवल कुछ शब्द ही कहूंगा। श्रीमान् जी, इस वाक्य खंड के संबंध में पांच संशोधनों की सूचना आई है। इस विशेष मद के संबंध में अनेकों प्रश्न उठाये गये हैं और, श्रीमान् जी, यह विचार किया गया है कि इस मद का अंतिम रूप निश्चित करने के पूर्व इन प्रश्नों के समस्त पहलुओं पर विवरण पूर्ण जांच करना वांछनीय होगा। श्रीमान् जी, यदि आप मुझे आज्ञा दें तो मैं यह निवेदन करूंगा कि इस मद को अभी तो स्थगित कर दिया जाये। हम उसे बाद में लेंगे।

***अध्यक्षः** सुझाव यह है कि इस मद को स्थगित कर दिया जाये और ऐसे रूप में प्रस्तुत किया जाये जो सबको मान्य हो और फिर ये सब संशोधन अनावश्यक हो जायेंगे। हम सूची के अन्य मद 9 को लेंगे।

मद 9

(सर्वश्री मोहनलाल सक्सेना और अनन्तशयनम् आयंगर ने अपने संशोधन पेश नहीं किये।)

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगालः मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय मैं यह प्रस्ताव पेश करता हूं कि मद 9 को निकाल दिया जाये। कारण यह है कि विगत काल में इस बात पर पर्याप्त असन्तोष रहा है कि हमें अस्त्रशस्त्र प्रयोग करने की कोई भी स्वतंत्रता नहीं है। इस बात पर लगातार बड़े-बड़े आंदोलन होते रहे हैं जिसकी व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं है। मेरा संशोधन अब है कि इसे संघ की सूची में से निकाल देना चाहिये और प्रांतीय सूची का विषय बना देना चाहिये जिसके लिये एक उपयुक्त संशोधन बाद में पेश कर दिया जायेगा। मेरा ख्याल है कि जब तक अंग्रेज यहां थे उनका उद्देश्य जनता का निशस्त्रीकरण करना था। भारतीयों से ईर्ष्या तथा द्वेष के कारण उन्होंने ऐसा किया और इसे केन्द्र का विषय रखा। अब चूंकि अंग्रेज चले गये हैं, मैं निवेदन करता हूं कि इस विषय

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

को केन्द्र में रखने के कारण भी विलीन हो गये। केन्द्र की यह एक बड़ी विचित्र चेष्टा होगी कि वह प्रान्तों को इस अधिकार का प्रयोग करने दे। यदि प्रान्तों को यह विशेषाधिकार देने में कुछ कठिनाई है तो इसे सूची संख्या 3 में रखना चाहिये और यह सहगामी विषय हो जायेगा। मैं यह निवेदन करता हूं कि इस मद का केन्द्रीय विषय के रूप में जारी रखना गलत होगा। मेरा विश्वास है कि यद्यपि अंग्रेज चले गये हैं लेकिन उनका भूत अभी तक हमारे हृदय पर सवार है और हम अधिकारों से सटे रहना चाहते हैं।

***अध्यक्षः** केवल एक संशोधन है। वह यह है कि मद संख्या 9 को निकाल दिया जाये। क्या कोई सदस्य इस विषय पर बोलना चाहता है?

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान् जी, मि॰ नजीरुद्दीन अहमद के वक्तव्य से मैंने यह समझा कि वे इस अस्त्र, शस्त्र, गोलाबारूद तथा विस्फोटक पदार्थों के मद को कानून निर्माण के क्षेत्र से बाहर हटाने का प्रस्ताव पेश नहीं करते हैं। उनके सुझाव से प्रतीत होता है कि इस विषय पर संघ द्वारा कानून निर्माण करने की आवश्यकता नहीं है तथा इस विषय को प्रान्तों को दे दिया जाये। श्रीमान् जी, मैं समझता हूं कि विशेषकर इन दिनों में अस्त्र, शस्त्र, गोलाबारूद तथा विस्फोटक पदार्थों जैसे महत्त्वपूर्ण विषय पर यह बड़ा आवश्यक है कि कानून द्वारा जो भी नियंत्रण किया जाये वह केन्द्र से ही किया जाना चाहिये। अस्त्र, शस्त्र, गोलाबारूद तथा विस्फोटक पदार्थों का निर्माण करने, उन पर अधिकार रखने, उनका स्थानांतरण करने में तथा प्रयोग करने में समानता रहनी चाहिये। मि॰ नजीरुद्दीन अहमद को शायद यह जानकर लाभ होगा कि रियासतें भी जो संघ में शामिल हैं उन्होंने इस विषय को स्वीकार कर लिया है, जिसका मतलब यह है कि वे भी इस विषय पर केन्द्रीय व्यवस्थापिका द्वारा कानून निर्माण किये जाने के लिये तैयार हैं। मैं आशा करता हूं कि वे इस संशोधन पर जोर नहीं देंगे।

***अध्यक्षः** मैं मद संख्या 9 पर मतदान लूंगा। संशोधन यह है कि इस मद को निकाल दिया जाये।

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** मैं मद पर मतदान लेता हूं कि इसे रखा जाये।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 10

***अध्यक्षः** अब हम मद 10 को लेंगे। यदि श्री हिम्मतसिंह महेश्वरी अपना संशोधन पेश करना न चाहें तो इस मद पर भी कोई संशोधन नहीं है।

***श्री हिम्मतसिंह के० महेश्वरी** (सिक्किम और कूच बिहार समूह): अध्यक्ष महोदय, मद 10 में निम्न पद अन्त में बढ़ा दिया जाये:

''प्रदेशों को मुआवजा देने के अधीन''

मेरे इस संशोधन का उद्देश्य यह है कि अणु शक्ति (atomic energy) उत्पादन करने के लिये जिन जिन स्थानों के खनिज पदार्थों के साधनों की आवश्यकता हो उनको मुआवजा दिया जाना चाहिये। इसके लिये किसी लम्बे तर्क की आवश्यकता नहीं है और मैं आशा करता हूं कि रिपोर्ट के निर्माता बिना किसी हिचकिचाहट के इसे स्वीकार कर लेंगे।

***अध्यक्षः** क्या कोई और व्यक्ति इस विषय पर कुछ कहना चाहता है?

***माननीय श्री एन० गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान्जी, यह मद केवल अणु शक्ति तथा उसके लिये आवश्यक खनिज पदार्थों के संबंध का है। संघ की सूची में ऐसे मदों के शामिल करने का आशय यह नहीं है कि केन्द्र किसी के निजी खनिज साधनों को अपनाना चाहता हो, चाहे वे देशी रियासतों के हों, प्रान्तों के हों अथवा किसी के व्यक्तिगत हों। यदि संघ के हित के लिये यह आवश्यक है कि नियंत्रण का प्रयोग किया जाये या उन साधनों को प्राप्त कर लिया जाये तो उचित मुआवजा अवश्य दिया जायेगा। मैं इसलिये इन शब्दों को अन्त में जोड़ना आवश्यक नहीं समझता।

***श्री हिम्मतसिंह के० महेश्वरीः** जो आश्वासन दिया गया है उस पर विचार करते हुये मैं, अपने संशोधन पर जोर नहीं देना चाहता हूं।

***अध्यक्षः** मैं यह मान लेता हूं कि संशोधन को वापस लेने दिया जाये। मैं मूल मद 10 पर वोट लेता हूं।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 11

***अध्यक्षः** हम दूसरे मद को लेते हैं (मद 11)। अब तक इस मद 11 पर कोई संशोधन नहीं है। मैं इस पर मतदान लेता हूं।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 12

***अध्यक्ष:** हम मद 12 को लेते हैं। रियासतों के प्रधानमंत्रियों की ओर से इस पर एक संशोधन है।

***सर वी०टी० कृष्णमाचारी** (जयपुर): हम अपने संशोधन को पेश नहीं करते हैं।

***अध्यक्ष:** मद 12 पर और कोई संशोधन नहीं है। जो इस मद के रखे जाने के पक्ष में है, वे 'हां' कहेंगे।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 13

***अध्यक्ष:** हम मद 13 पर आते हैं। मद 13 पर कोई संशोधन नहीं है। मैं इस पर वोट लूंगा।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 14

***अध्यक्ष:** अब हम मद 14 को लेते हैं। सर रामास्वामी मुदालियर तथा रियासतों के अन्य प्रधानमंत्रियों की ओर से एक संशोधन है।

***सर वी०टी० कृष्णमाचारी:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव रखता हूं कि निम्न पद मद 14 के अंत में जोड़ दिया जाये:

''बशर्ते कि केवल इस मद को सूची में शामिल कर लेने के आधार पर किसी प्रान्त या संघ में सम्मिलित रियासत के लिये इन निर्णयों को क्रियान्वित करने का अधिकार संघ को नहीं होगा जब तक कि प्रान्त या रियासत की पूर्व स्वीकृति न हो।''

श्रीमान् जी, हम अनेक प्रकारों के अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों, संघों तथा अन्य संस्थाओं में भाग लेते हैं। इन सम्मेलनों, संघों तथा अन्य संस्थाओं के निर्णयों को क्रियान्वित करने के अधिकार का आधार यह होना चाहिये कि निर्णय का विषय प्रान्तीय है या केन्द्रीय। मेरा प्रस्ताव यह है कि यदि ये निर्णय प्रान्तीय विषयों से

संबंधित हैं तो इन निर्णयों को क्रियान्वित करने के पूर्व प्रान्तों की स्वीकृति ले लेनी चाहिये। ऐसे प्रतिबंध की अनुपस्थिति में प्रान्तों और रियासतों के अधिकार प्रायः शून्य रूप हो जायेंगे। ये सम्मेलन कृषि, खाद्य पदार्थ तथा अधिकतर और भी ऐसे विषयों से संबंध रखते हैं जो कि प्रान्तीय अधिकारों के अंतर्गत आते हैं। माननीय सदस्यों को याद होगा कि भारतीय सरकार एक्ट में धारा 106 है जो इसकी व्यवस्था करती है। यदि धारा 106 के पुनर्निर्माण करने की मंशा हो तो मेरे संशोधन की आवश्यकता नहीं होगी। और यदि ऐसी कोई मंशा नहीं है तो मैं प्रस्ताव रखता हूं कि इन शब्दों को मद 14 के अंत में जोड़ दिया जाये।

***अध्यक्षः** श्री माधवराव जी, आपके नाम से मद 14 पर एक संशोधन है।

***श्री एन॰ माधव रावः** (पश्चिमी रियासतों का समूह 2): मैं संशोधन को प्रस्तुत नहीं करना चाहता हूं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव रखता हूं कि मद 14 के अंत में निम्न जोड़ दिया जाये:

''कानून निर्माण की अपनी क्षमता के अंतर्गत विषयों पर तथा प्रान्त अथवा रियासत पर प्रभाव डालने वाले अन्य विषयों पर ऐसे प्रदेशों की स्पष्ट स्वीकृति से।''

जिस विषय को मैं इस संशोधन में रखना चाहता हूं वह यह है कि ऐसे विषय हो सकते हैं जो पूर्णतया केन्द्रीय हों या वे सूची संख्या 3 के अंतर्गत आ सकते हैं, और इस सूरत में भी केन्द्र को उन पर न्यायाधिकार होगा। परन्तु सूची संख्या 2 में भी विषय हो सकते हैं अर्थात् प्रान्तीय न्यायाधिकार के अंतर्गत। इस सूरत में बिना प्रांत की स्वीकृति के केन्द्र को कुछ करने का अधिकार देना अनुचित होगा। वास्तव में वह एक ऐसी चीज पर दूसरों के अधिकारों का अप्रत्यक्ष रूप से दबा बैठना होगा जो कि पूर्णतया केवल प्रान्त के लिये नियत किये गये हैं।

रियासतों के संबंध में जो कागजात हम लोगों में घुमाये गये हैं उनसे हमें विदित होता है कि रियासतें कुछ प्रमुख प्रतिबंधों के अधीन सम्मिलित हुई हैं। वे कुछ विषयों के संबंध में सम्मिलित हुई हैं, जिनकी इस समझौते के साथ लगी हुई सूची में स्पष्ट व्याख्या की गई है। ऐसे विषय भी हो सकते हैं जो इस सूची के क्षेत्र के बाहर हों। उस हालत में प्रान्तीय सरकार से कानून निर्माण के लिये

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

कहना अथवा समझौते के क्षेत्र से बाहर के विषयों के अंतर्गत मामलों पर समझौता करना उस सरकार का समझौते के विरुद्ध दूसरों के अधिकार दबाना होगा। समझौता इसे पूर्णत: स्पष्ट करता है कि रियासतें सूची में शामिल विषयों के अतिरिक्त अन्य किसी विषय के लिये सम्मिलित नहीं हुई हैं। इन परिस्थितियों में, मैं निवेदन करता हूं कि केन्द्र के लिये यह उचित नहीं होगा कि वह उन विषयों का अधिकार प्राप्त करे जो उसके दायरे के बाहर है। इसलिये मेरे संशोधन में निहित सिद्धान्त गड़बड़ी रोकने तथा कुछ विषयों के अधिकार झपटने में रुकावट डालने के लिये आवश्यक है।

***अध्यक्ष:** और कोई संशोधन नहीं है। अब संशोधनों तथा मूल मद पर वाद-विवाद हो सकता है। जो चाहे वे बोल सकते हैं।

***श्री के०एम० मुंशी** (बम्बई: जनरल): अध्यक्ष महोदय, जो संशोधन मेरे माननीय मित्र श्री वी०टी० कृष्णमाचार्य ने प्रस्तुत किया है मैं उसका विरोध करता हूं। माननीय सदस्य देखेंगे कि मद 16 इस प्रकार है, ''विदेशों से संधियों तथा समझौते में सम्मिलित होना तथा उनको क्रियान्वित करना''। इस मद पर उन्हीं चार माननीय सदस्यों का एक ऐसा ही संशोधन और है। इस संशोधन पर मैं तर्क की प्रत्याशा नहीं चाहता हूं। लेकिन मद 16 जैसा कि माननीय सदस्यों ने देखा होगा, विदेशों से संधियों तथा समझौते को क्रियान्वित करने के संबंध में है। ये समझौते और संधियां इस देश और अन्य देश में द्विरूपात्मक हैं। जहां तक मद 14 का संबंध है....।

***सर वी०टी० कृष्णमाचारी:** क्या हम मद 16 पर हैं?

***श्री के०एम० मुंशी:** मैं इन दोनों में भेद बतला रहा हूं, यदि माननीय सदस्य में सुनने का धैर्य हो। मद 14 द्विरूपात्मक संधियों के संबंध का नहीं है बल्कि अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों के संबंध का है। सभा इस बात को भली प्रकार जानती है कि आजकल अंतर्राष्ट्रीय संबंध संधियों द्वारा शासित नहीं किये जाते हैं। ऐसे बहुत से सम्मेलन हैं जहां भारत अपने प्रतिनिधि भेजता है और भविष्य में और भी अधिक प्रतिनिधि भेजेगा। इन सम्मेलनों में इस आधार पर निर्णय किये जाते हैं कि भारत के प्रतिनिधियों को इन निर्णयों को कार्यान्वित करने का अधिकार है। भारत के प्रतिनिधि की बात का कोई भी प्रभाव नहीं होगा, यदि उसको इस प्रतिबंध का पालन करना पड़े कि वह देश को वापस आये और अपने 35 प्रदेशों की सरकारों

से परामर्श करे और यदि उनमें से एक भी असहमत हो तो वह उन निर्णयों को क्रियान्वित न कर सके। इस आधुनिक जगत में भारत के लिये ऐसी परिस्थितियों में यह असंभव होगा कि वे किसी सम्मेलन में प्रभावयुक्त भाग ले सकें; सिवाय इसके कि वह वाद-विवाद संस्था में बिना किसी निर्णय पर पहुंचने के लिये भाग ले सके। इसलिये यह नितांत आवश्यक है कि केन्द्रीय सरकार को इन सम्मेलनों में भाग लेने के तथा उनके निर्णयों को क्रियान्वित करने के पर्याप्त अधिकार हों।

उदाहरण के रूप में, आप इस सरल उदाहरण को लीजिये जो मैं अभी आपके सामने रखता हूं। मान लो कि किसी देश के साथ व्यापारिक संबंध की बात हो और निकट युद्ध के फलस्वरूप अथवा उसके किसी ऐसे व्यवहार से जो अंतर्राष्ट्रीय नीति के विरुद्ध हो, इन व्यापारिक संबंधों को समाप्त करना हो और मान लो कि अंतर्राष्ट्रीय संघ के समस्त सदस्य एकमत होकर यह कहते हैं कि उनको इन संबंधों का परित्याग कर देना चाहिये या उनके संबंध में किसी विशेष नीति का अनुसरण करना चाहिये तो ये एक निर्णय होगा न कि संधि। उस निर्णय को लगभग समस्त संसार द्वारा ग्रहण करने पर भी भारत के प्रतिनिधि को यह कहना पड़ेगा कि वह भारत में वापस जायेगा और उसे भारत के प्रत्येक प्रदेश से यहां तक कि 20 या 25 हजार की आबादी की रियासतों से उसे उस निर्णय के बारे में परामर्श करना होगा और जब तक कि ऐसी स्वीकृति प्राप्त न हो वह उसे क्रियान्वित नहीं कर सकता। यह सब अंतर्राष्ट्रीय जगत के समक्ष समस्त केन्द्रीय सरकार का एक प्रहसन होगा। जैसा कि सभा को विदित है हम ऐसी स्थिति की ओर अग्रसर हो रहे हैं जिसमें बड़ी-बड़ी नीतियों के संबंध में अधिकांश निर्णय अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों द्वारा वास्तविक संधियों के रूप में नहीं बल्कि समझौते के रूप में किये जायेंगे। शिक्षा, श्रम-काल तथा अन्य अनेक विषयों पर इसी प्रकार निर्णय किये जाते हैं। यदि यह वाक्यांश हटा दिया जाये तो फिर इसका अर्थ ठीक यह होगा कि भारत का एक छोटा भाग शेष संसार द्वारा स्वीकृत निर्णय को क्रियान्वित करने से रोक सकता है। मान लीजिये यह अधिकार ले लिया जाता है तो भारत के प्रतिनिधि ऐसे किसी सम्मेलन में जा सकते हैं और उनके सारे निर्णयों में सहायक हो सकते हैं और जब वे यहां आते हैं तो भारत का 60वां अंश उन निर्णयों को क्रियान्वित करने में रोक लगा सकता है। इस संशोधन के स्वीकार करने का यह प्रभाव होगा। अत: यदि भारत अपना अंतर्राष्ट्रीय व्यक्तित्व स्थापित करना चाहता है और संसार के अन्य सर्वोच्च राष्ट्रों के समान बनना चाहता है तो उसे इन निर्णयों में केवल भाग लेने का ही नहीं वरन उनको क्रियान्वित करने का अधिकार होना चाहिये।

[श्री के.एम. मुंशी]

संरक्षण यह है। इस मद को यहां रखने से आशय यह है कि इन निर्णयों को क्रियान्वित करने के लिये केन्द्रीय व्यवस्थापिका को कानून निर्माण करने का अधिकार होगा। किसी निर्णय को क्रियान्वित करने से पूर्व वह केन्द्रीय व्यवस्थापिका के सामने रखा जायेगा। वह व्यवस्थापिका उस पर पूर्णरूप से वाद-विवाद करेगी और फिर वह यह निश्चित करेगी कि वह उसको क्रियान्वित करे या नहीं। यूनियन के किसी भी सदस्य के पीठ पीछे इस विषय को नहीं लिया जायेगा। इससे यह अभिप्राय है कि नीचे की सभा को ही नहीं वरन ऊपर की सभी प्रदेशों की सभा के सामने यह विषय रखा जायेगा। इस प्रकार समस्त भारत के प्रतिनिधियों को—जनता तथा रियासत दोनों के प्रतिनिधियों को—इस पर मत देने का अधिकार होगा और समस्त भारत के मत का प्रभाव रहेगा। जिस रूप में वाक्यांश है उसका यही प्रभाव है। अतः यह इस कारण नहीं है कि किसी रियासत तथा प्रान्त की पीठ पीछे कुछ कर दिया जायेगा। इन दोनों व्यवस्थापिकाओं में सम्मिलित भारत एकरूप होकर प्रत्येक प्रदेश के दृष्टिकोण पर जिस रूप में कि उसके सामने रखा जायेगा, विचार करेगा और फिर समस्त भारत के हित के लिये निर्णय करेगा। यदि दोनों व्यवस्थापिकायें बहुमत से यह निश्चय करती हैं कि किसी निर्णय को क्रियान्वित करना है तो क्या यह सुझाव रखा गया है कि कोई रियासत या छोटा प्रान्त यह कह सकता है कि व्यवस्थापिका ने चाहे जो कुछ किया हो उसको इस निर्णय के क्रियान्वित करने की स्वतंत्रता है? इससे तो देश की सर्वोच्च सत्ता के आधार का नाश होता है। इसलिये मैं निवेदन करता हूं कि यह संशोधन अहितकर प्रतीत होता है। इसके द्वारा जो फल होगा वह अंतर्राष्ट्रीय समाज में भारत के उच्च सदस्य होने के अधिकारों को कुचल डालेगा। मैं निवेदन करता हूं कि इस संशोधन को सभा द्वारा अस्वीकृत किया जाये।

***पं. हृदयनाथ कुंजरू** (संयुक्त प्रांतः जनरल): श्रीमान् जी, मैं यह अनुभव करता हूं कि सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य ने जो संशोधन सभा के समक्ष रखा है और जो कि भारत सरकार के सन् 1935 ई॰ के एक्ट की धारा 10 (ख) का लगभग दुहराना मात्र है, वह बहुत बुरा है। गत दस वर्ष से इस व्यवस्था पर जितनी समालोचना हुई है उससे वे अपरिचित नहीं हो सकते; विशेषकर श्रम से संबंधित विषय पर। यद्यपि उस एक्ट के अंतर्गत श्रम से संबंधित प्रश्न पर दोनों केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारों द्वारा विचार किया जा सकता है, फिर भी यह स्पष्ट है कि समस्त मुख्य बातों में श्रम का प्रश्न अखिल भारतीय प्रश्न है, और इस पर आंशिक रूप से प्रान्तों द्वारा विचार नहीं किया जा सकता है। यदि इस पर सफलतापूर्वक

विचार किया जाता है, दूसरे शब्दों में इस प्रकार कि जिससे समस्त देश में संतोष उत्पन्न हो जाये तथा वह अंतर्राष्ट्रीय विचार और माप के अनुसार हो, तो यह बिल्कुल स्पष्ट है कि यह केन्द्र के अधिकार में पूर्णतया रहे जिससे कि अंतर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलनों में किये गये समझौते पर अंतिम प्रयत्न किया जा सके। परन्तु 1935 ई॰ के विधान के अंतर्गत उसको यह अधिकार नहीं थे। इन विषयों से संबंधित किसी भी प्रश्न ने जिनके क्रियान्वित करने के लिये प्रदेशों की सरकारों की अनुमति की आवश्यकता थी, इतना असंतोष उत्पन्न नहीं किया जितना कि श्रम से संबंधित प्रश्न ने। मैं समझता हूं कि यदि और कोई उदाहरण भी विचार के लिये न हो तो भी सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य के संशोधन को निकाल फेंकने में हम पूर्णतया न्याययुक्त हैं।

और भी अनेकों प्रश्न हैं जिन पर इन दिनों सम्पूर्ण देश द्वारा विचार करने की आवश्यकता है। सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य को भय था कि मद 14 द्वारा केन्द्र में जो अधिकार प्रदान किया जायेगा वह बहुत अधिक होगा और उन विषयों का उदाहरण देते हुये, जिन पर अधिक अधिकार हो जायेंगे, उन्होंने खाद्य तथा कृषि का उल्लेख किया था। मुझे तो आश्चर्य हुआ था जब मेरे माननीय मित्र ने इन विषयों का उल्लेख किया। आज कोई भी विषय यदि है जिन पर कि राष्ट्रीय सरकार को विचार करना है, तो वह कृषि तथा खाद्य के विषय हैं। हम उस भीषण स्थिति से परिचित हैं जिसमें हम 1943 ई॰ और 1944 ई॰ में थे क्योंकि भारतीय सरकार के पास प्रान्तीय सरकारों पर नियंत्रण रखने और उनसे समान नीति को स्वीकार कराने के या तो अधिकार नहीं थे या कुछ समय तक उनको प्रयोग में लाने के लिये उसकी अनिच्छा थी। मैं और आगे विषय को बढ़ाते हुए कहता हूं कि अनुभव ने यह प्रकट किया है कि यह विषय इतना महत्त्वपूर्ण है कि यद्यपि युद्ध की परिस्थिति विद्यमान नहीं है फिर भी केन्द्रीय सरकार को खाद्य और कृषि के संबंध में प्रान्तीय नीतियों के समीकरण करने के अधिकारों को कम से कम कुछ समय तक और प्रयोग में लाते रहना चाहिये। श्रीमान् जी, ये प्रश्न इतने महत्त्वपूर्ण हैं कि अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं को इन पर लगातार ध्यान रखने की आवश्यकता है। एक खाद्य और कृषि संस्था है जिसको इसलिये स्थापित किया गया है कि समस्त प्रमुख कृषि प्रधान देशों में इन प्रश्नों पर समान रूप से विचार किया जा सके। यह बड़े दुर्भाग्य की बात होगी, यह अवनति का कारण होगा यदि हम खुली आंखों से तथा उन खतरों का जिनमें हम पड़ जायेंगे, पूर्ण ज्ञान रखते हुये सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य के संशोधन को स्वीकार करें। समान नीति को ग्रहण करने के लिये यदि हमें प्रत्येक प्रदेश की सम्मति प्राप्त करनी पड़े तो हम फिर सन् 1943 ई॰ की स्थिति में पड़ जायेंगे।

[प. हृदयनाथ कुंजरू]

श्रीमान् जी, इसके अतिरिक्त हाउस द्वारा मद 14 के स्वीकार कर लेने पर जिस अधिकार का केन्द्र उपभोग करेगा उसके संबंध में रियासत अथवा अन्य किसी प्रदेश के प्रतिनिधियों को जो कुछ भी भय है, उसके संबंध में, मैं एक बात कहना चाहूंगा। किसी उत्तरदायित्व को लेने के पूर्व राष्ट्रीय सरकार स्वभावत: यह विचार करेगी कि उत्तरदायित्व ऐसा है जिसे प्रदेश स्वयं अपने साधनों से पूरा कर सकता है, अथवा वह राष्ट्रीय सरकार की सहायता से ही पूरा हो सकता है। जल्दी में ऐसे समझौते नहीं किये जायेंगे जिन पर अधिक खर्च होगा, क्योंकि उस सूरत में उसे उत्तरदायित्वों को पूर्ण करने के लिये प्रान्तों की सहायता करने में नैतिक रूप से बाध्य होना पड़ेगा। माननीय सदस्यों को भय होगा कि अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों की बात स्वीकार कर लेने से प्रदेशों का इतना खर्च बढ़ जायेगा जिसे वे बरदाश्त नहीं कर सकेंगे। मैं नहीं समझता कि इस प्रकार डरने की कोई आवश्यकता है क्योंकि यह भली प्रकार विदित है कि वर्तमान काल में प्रदेशों को चाहे कैसे भी उपयुक्त आर्थिक अधिकार दिये जायें, वे न तो शिक्षा को नि:शुल्क कर सकेंगे और न अनिवार्य, न वे जन-साधारण के स्वास्थ्य संबंधी सर जोसेफ भोर कमेटी की सिफारिशों को क्रियान्वित कर सकेंगे और न वे अन्य उन विषयों में संतोषजनक प्रगति कर सकेंगे जोकि उनके अधिकार में हैं, जब तक केन्द्र से उन्हें बहुत अधिक आर्थिक सहायता न मिले। इन परिस्थितियों में मेरे लिये यह अविचारणीय है कि बिना यथेष्ट विचार किये तथा प्रदेशों से पूर्व परामर्श लिये बिना केन्द्रीय सरकार उनको उन नीतियों के ग्रहण करने के लिये विवश करे जिनको क्रियान्वित करना उनके साधनों से परे है। एक बात और है, श्रीमान् जी, कि उन विषयों से संबंध रखने वाले अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में, जिनका प्रांतों से भी संबंध है, केवल केन्द्रीय मंत्रिमंडल या केन्द्रीय व्यवस्थापिका की ओर से ही भारतीय प्रतिनिधि नहीं होंगे। वे प्रान्तों तथा अन्य प्रदेशों से भी लिये जायेंगे। अत: भारतीय सरकार द्वारा किसी अंतर्राष्ट्रीय समझौते के करने से प्रदेशों की आर्थिक व्यवस्था पर प्रभाव के बारे में हम आशंका क्यों करें? श्रीमान् जी, विगत अनुभव पर विचार करते हुये तथा भारतीय सरकार के सन् 1935 ई० के एक्ट द्वारा केन्द्रीय सरकार पर अभागे प्रतिबंध के लगाये जाने के कारण अंतर्राष्ट्रीय श्रम-सम्मेलनों में पिछले 25 वर्षों से भी अधिक काल तक जो हमारी स्पर्धाहीन हालत रही है उस पर विचार करते हुये, मेरी राय से यह उचित तथा आवश्यक है कि अंतर्राष्ट्रीय समझौतों को करने के लिये केन्द्रीय सरकार को व्यापक अधिकार होने चाहियें। अपने वक्तव्य को समाप्त करने के पूर्व मैं यह कहना चाहूंगा कि यदि प्रदेशों की संख्या सीमित होती और यदि वे इस आकार के होते कि भारतीय सरकार को उनसे परामर्श

करना तथा उनके विचार पर उचित ध्यान देना संभव हो सकता था तब तो सर वी०टी० कृष्णमाचार्य के संशोधन को स्वीकार करने की सूरत होती। लेकिन अभी तक हमें यह नहीं मालूम कि प्रदेशों की कितनी संख्या होगी और छोटे से छोटे प्रदेश का क्या आकार होगा। यदि प्रदेश में चन्द हजार या सौ व्यक्ति हुये तो सर वी०टी० कृष्णमाचार्य का संशोधन हमें कठिन स्थिति में डाल देगा। अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में हमारा मजाक उड़ाया जायेगा, अगर हम यह कहेंगे कि हम उन प्रदेशों से परामर्श किये बिना भारत को बाध्य नहीं कर सकते जो कि बड़ी जमींदारियों के समान हैं। इस पर विचार करते हुये सर वी०टी० कृष्णमाचार्य के संशोधन से जो स्थिति उत्पन्न हो जायेगी उसका विचार करना असंभव है। अतः मैं सम्पूर्ण हृदय से उसके अस्वीकार किये जाने के पक्ष में हूं।

***सरदार के०एम० पनिक्कर** (बीकानेर): अध्यक्ष महोदय, सर वी०टी० कृष्णमाचार्य के प्रस्ताव के पश्चात जो वाद-विवाद हुआ उसमें मेरे विचार से बहुत गलतफहमी रही है। वाद हेतु यह नहीं है कि अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन के निर्णयों को केन्द्रीय व्यवस्थापिका द्वारा पुष्ट किया जाये या क्रियान्वित किया जाये। प्रत्येक व्यक्ति ने यह स्वीकार किया है कि भारत द्वारा अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में किये गये समझौतों को केन्द्रीय व्यवस्थापिका में पुष्ट किया जाना चाहिये तथा क्रियान्वित किया जाना चाहिये। फिर वाद हेतु क्या है? वाद हेतु यह है कि ऐसा करने के लिये इसको संघ के मदों के साथ रखा जाये अथवा सहगामी सूची में रखा जाये, जिससे कि इसके संबंध का कानून निर्माण करने का अधिकार केन्द्रीय व्यवस्थापिका को हो। सर्वश्री मुंशी और कुंजरू ने जो वाद हेतु उठाया है वह यह है कि ऐसे कई सम्मेलन हैं जिनमें भारत को सम्मिलित होना तथा भाग लेना है, जिनमें निर्णय किये जायेंगे और समस्त प्रदेशों से परामर्श करना संभव नहीं है जिसके लिये कि हम वापस आयें और उन निर्णयों की व्यवस्था करें और उनको क्रियान्वित करें। यहां मैं यह कहने का साहस करता हूं कि इसमें थोड़ी सी गलतफहमी है क्योंकि यदि आप उदाहरण के रूप में आई०एल०ओ० का प्रश्न लेते हैं जिसका प्रमुख रूप में वर्णन किया गया है, तो यदि आप सहगामी सूची की ओर ध्यान दें तो आप देखेंगे कि मद 26 श्रम की भलाई, श्रम की शर्तें, प्रोविडेन्ट फण्ड, मालिकों का देना तथा श्रमिकों का मुआवजा, स्वास्थ्य बीमा, मय असमर्थ होने पर तथा वृद्धावस्था में पेंशन के संबंध में है। जब तक कि यह मद सहगामी सूची में है तब तक किसी कानून के पास करने का अधिकार, जिसे वह (संघ) आवश्यक समझे, चाहे वह किसी अंतर्राष्ट्रीय समझौते की शर्त के अनुकूल हो या उसके विपरीत अपनी

[सरदार के.एम. पनिक्कर]

नीति को प्रभावान्वित करने के लिये हों, संघ व्यवस्थापिका को है। यही प्रकार प्रत्येक महत्त्वपूर्ण विषय के लिये है चाहे वह सहगामी सूची का हो, चाहे संघ सूची का। अत: वाद हेतु जो उत्पन्न होता है वह संघ के किसी प्रमाणित सम्मेलन जैसे कि यू॰एन॰ओ॰ या आई॰एल॰ओ॰ में जाने मात्र का नहीं है वरन् यह कहिये कि नैतिक आधार पर स्विट्जरलैंड की पुन: शस्त्रीकरण तक के सम्मेलन (Moral Re-armament Conference) में क्या हम उन निर्णयों को प्रभावान्वित कर सकते हैं? ऐसा करने के लिये यह नितांत आवश्यक है कि उसको संघ या सहगामी सूचियों के किसी प्रमुख मद से संबंधित किया जाये और संघ या सहगामी सूचियां इस प्रकार बनाई गई हैं कि सर्वसाधारण के हित की समस्त बातें उनमें शामिल हैं। अत: जो कुछ भी रियासतों या प्रांतों के लिये शेष रह गया है वे केवल स्थानीय शासन के विषय हैं जोकि अखिल भारतीय या सार्वजनिक नहीं हैं। ऐसी हालत में व्यापक अधिकार देना जैसे कि कानून-निर्माण द्वारा निर्णयों को लागू करना, अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में तय किये गये समझौते या प्रबंध को क्रियान्वित करना—जो कि स्वयं संकटपूर्ण व्याख्या है, क्योंकि यह नहीं बताया गया कि ये किस प्रकार के अंतर्राष्ट्रीय संघ या सम्मेलन होंगे—बहुत संकटपूर्ण है जो कि प्रत्येक प्रांत तथा रियासत के विधान को शक्तिहीन करेगी, क्योंकि यह संघ या सहगामी सूची के विषयों के अंतर्गत नहीं है। यह सब होते हुये भी भारतीय सरकार के एक्ट की धारा 106 जो कि विशिष्ट रूप में है, इस प्रकार के निर्णयों को क्रियान्वित करने के अधिकारों को सीमित करती है। मैं अन्य किसी सदस्य के समान ही इच्छुक हूं कि अन्य देशों से समझौते तथा संधियां करने में केन्द्रीय व्यवस्थापिका को यथेष्ठ अधिकार हों। परन्तु ऐसा करने के लिये इसे सहगामी या संघ की सूचियों में किसी न किसी विषय से संबंधित कर देना चाहिये। जिस रूप में मद 14 है, यद्यपि इसका अनोखा शब्द विन्यास है, वह कहता है:

> ''अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों, संघों तथा अन्य संस्थाओं में भाग लेना और वहां किये गये निर्णयों को क्रियान्वित करना।''

यदि यह संघ तथा सहगामी सूचियों में दिये गये विषयों से संबंधित है तब तो यह वाक्यखंड आवश्यक ही नहीं है। यदि यह संघ तथा सहगामी सूचियों के बाहर का विषय है तो यह वाक्यखंड प्रदेशों की सूची या प्रांतीय सूची के प्रत्येक मद को अशक्त बना देगा। अत: मैं जोरदारी के साथ निवेदन करूंगा कि आप मद 16 में चाहे जो कुछ रखें, आप आई॰एल॰ओ॰ और अन्य प्रमाणित अंतर्राष्ट्रीय

सम्मेलनों तथा संघों के संबंध में स्थिति स्पष्ट करें। मैं सम्मानपूर्वक निवेदन करूंगा कि केन्द्रीय व्यवस्थापिका को और अधिक अधिकार देना जो व्यापक हों और जिनकी व्याख्या नहीं की जा सकती, प्रांतों तथा प्रदेशों के प्रत्येक समूह को अशक्त बनाना होगा और बिना किसी उस उचित व्यवस्था के संघ को अधिकार के प्रत्येक क्षेत्र में हस्तक्षेप करने का अधिकार देना होगा जिस पर उसका कोई अधिकार नहीं है। अतः मुझे सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य के संशोधन का समर्थन करने में खुशी है।

***सर बी॰एल॰ मित्तर** (बड़ौदा): अध्यक्ष महोदय, मैं इस परिषद् का ध्यान एक बात की ओर आकर्षित करना चाहता हूं जिसे अभी तक स्पर्श नहीं किया गया है। मैं सरदार पनिक्कर से सहमत हूं कि इस विषय में कुछ गलतफहमी हैं जिसके लिये उन्होंने भारत सरकार के एक्ट की धारा 106 का हवाला दिया है। धारा 106 का उस समय निर्माण किया गया था—जैसा कि उस एक्ट में दिया गया है—जब कि भारत की एक स्वतंत्र सत्ता नहीं थी। भारत ब्रिटिश भारत और रियासतों का भारत था अतः रियासतों के लिये विशेष व्यवस्था बनानी पड़ी थी। परन्तु अब भारत एक स्वतंत्र सत्ता है। जहां तक बाह्य संसार का संबंध है, प्रांतों और रियासतों में अब कोई भेद-विभेद नहीं है। अतः भारत सरकार के किसी भी विधान का हवाला देना संगत नहीं है।

यह मद अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में किये गये निर्णयों को क्रियान्वित करने के बारे में है।

निर्णय को क्रियान्वित करने से पूर्व आपको उसकी पुष्टि करनी है। निर्णय को पुष्टि के लिये केन्द्रीय व्यवस्थापिका के सामने लाया जायेगा। इसके बाद यदि केन्द्रीय व्यवस्थापिका इस प्रकार का निर्णय करती है कि कानून निर्माण द्वारा इस पुष्टि को क्रियान्वित करने की आवश्यकता है तभी मद 14 का प्रयोग होता है। विचार करिये कि अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में निर्णय करने के लिये क्या-क्या विषय हो सकते हैं। वे ऐसे विषय होंगे जो समस्त राष्ट्रों पर लागू होते हों, जो राष्ट्रीय हित के विषय होंगे न कि प्रांतीय हित के संबंध के। ऐसा होने पर संघ या सहगामी सूची के बाहर का विषय सामान्यतः अंतर्राष्ट्रीय निर्णय का विषय नहीं होगा। परन्तु मान लीजिये कि प्रांतीय महत्त्व का विषय अंतर्राष्ट्रीय निर्णय में निहित हो गया, तो इस प्रश्न पर केन्द्रीय व्यवस्थापिका में वाद-विवाद होगा जिसे प्रदेशों का प्रतिनिधित्व प्राप्त है और यदि कोई संकट की बात होगी तो स्वभावतः केन्द्रीय

[सर बी.एल. मित्तर]

व्यवस्थापिका उसका ख्याल करेगी। फिर केन्द्रीय व्यवस्थापिका को अंतर्राष्ट्रीय निर्णयों को क्रियान्वित करने का अधिकार देने में कहां खतरा है?

अत: मेरा प्रश्न यह है कि प्राय: वे ही अंतर्राष्ट्रीय निर्णय होंगे जोकि राष्ट्रीय हितों के तथा अनेकों राष्ट्रों पर लागू होने वाले विषय हों। भारत अब अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में सत्तात्मक इकाई के रूप में सम्मिलित होता है न कि जैसा कि भारत सरकार के विधान के अंतर्गत दिये हुये अनेकों राजनैतिक इकाइयों के समूह के रूप में। ऐसा होते हुये श्रीमान् जी केन्द्रीय व्यवस्थापिका के यह अधिकार सौंपने में, मैं किसी संकट का आभास नहीं करता हूं। मैं अपने माननीय मित्र सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य से निवेदन करूंगा कि वे अपना संशोधन वापस ले लें।

***श्री एम॰एस॰ अणे** (दक्षिणी रियासतें): अध्यक्ष महोदय, इस मद ने यहां विवाद उत्पन्न कर दिया, जिसकी मुझे बिल्कुल ही आशा नहीं थी। परन्तु सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य के संशोधन के पेश हो जाने से और दूसरे संशोधन मि॰ नजीरुद्दीन अहमद के भी पेश हो जाने से वाद-विवाद ने वह रूप धारण कर लिया है जिसमें मैं देखता हूं कि विषय से संबंधित कुछ मौलिक सिद्धांतों का लोप हो गया है। हम देखें कि इस मद पर सभा को क्या विचार करना है। यह अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में भाग लेने के संबंध में है। जहां तक भाग लेने का संबंध है मैं समझता हूं कि कोई भी सदस्य इसका अपवाद करता हुआ प्रतीत नहीं होता कि भारत के नाम से इन सम्मेलनों में प्रतिनिधियों को भेजने का अधिकार केन्द्रीय सरकार या संघीय सरकार को होना चाहिये। वास्तविक कठिनाई इन निर्णयों के क्रियान्वित करने के संबंध में है। जैसाकि मेरे मित्र सर बी॰एल॰ मित्तर ने सही बताया है कि ये निर्णय अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में विचार-विमर्श तथा परामर्श के पश्चात् किये जायेंगे। उनमें उन विषयों पर निर्णय निहित होंगे जो कि किसी देश के विशेष भाग के हित के लिये न हों वरन् व्यापक दृष्टिकोण से अंतर्राष्ट्रीय लाभ तथा हित विषयक हों। प्रश्न यह है कि जब कि अंतर्राष्ट्रीय विचारधारा के निर्णयों को क्रियान्वित किया जाता है, चाहे वे प्रांतीय जगत के अंतर्गत विषयों से संबंधित हों, क्या वे निर्णय केन्द्रीय या संघ की सरकार द्वारा विचारणीय नहीं है? प्रादेशिक इकाइयों से यह आशा की जाती है कि वे प्रदेश के अंतर्गत रहने वाले मनुष्यों के हित के आधार पर कुछ विषयों में अपने प्रदेशों पर शासन करें। अत: उनके विचार अवश्य ही उस प्रादेशिक प्रकृति द्वारा सीमित रहेंगे जो कि उन भौगोलिक सीमाओं से घिरे हुये हैं, जिनके अंतर्गत प्रादेशिक इकाइयों को अपना शासन चलाना

है। परन्तु ये ऐसे निर्णय हैं जिनमें विश्व का दृष्टिकोण है; अतः इन निर्णयों को पूर्ण करने के लिये केन्द्र की सत्ता उत्तम होगी कि वह यह देखें कि उन निर्णयों को क्रियान्वित करना है या नहीं और यदि करना है तो उनको क्रियान्वित करने का क्या उचित रूप है, जिससे कि सभ्य संसार के समक्ष भारत का औचित्य स्थापित हो सके। यह विचार है जिस पर इन निर्णयों के लिये हमें सोचना है। मेरी राय में यह विषय ही ऐसे हैं कि प्रांतों तथा प्रादेशिक इकाइयों के निर्णय पर इन्हें छोड़ना संभव ही नहीं है। यही वह संस्था है—मेरा आशय केन्द्रीय व्यवस्थापिका से है—जोकि अधिक व्यापक तथा अंतर्राष्ट्रीय विचार कर सकने में समर्थ है। अतः इन निर्णयों को क्रियान्वित करने के अधिकार भी इसी को सौंपने चाहियें। मेरे ख्याल से यह सबको स्पष्ट है कि यदि समस्त संसार के सामने भारत को एक रूप होकर खड़ा होना है, तो वह केन्द्रीय व्यवस्थापिका ही होगी जो कि समस्त संसार के सामने भारत का प्रतिनिधित्व कर सकती है और उसे इन निर्णयों को क्रियान्वित करने का उत्तरदायित्व भी होना चाहिये। भारत से बाहर के समस्त विषयों के लिये अधिकार एकमात्र केन्द्रीय सरकार के शासन प्रबंध तथा नियंत्रण पर छोड़ दिये गये हैं। मैं निवेदन करता हूं कि यह विषय भी उसी प्रकार का है, अर्थात् वैदेशिक विभाग की सूची के अंतर्गत आने वाला। अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन बाह्य विषय है जो कि देश के अंतर्गत विषयों को प्रभावित करता है। अतः विषयों के स्वाभाविक प्रवाह में यह विषय केन्द्रीय सरकार द्वारा निर्णय किया जाना चाहिये, और मुझे विश्वास है कि यदि सर कृष्णमाचार्य अपने संशोधन पर जोर नहीं देते हैं और इस मद को इसी रूप में रहने देते हैं, तो वे देखेंगे कि कुछ भी हानि नहीं होगी। मैं इसलिये संशोधन का विरोध करता हूं।

***श्री टी॰ चनैया** (मैसूर): (कनाड़ी भाषा में बोले)

***श्री एच॰वी॰ कामत** (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, माननीय सदस्य अंग्रेजी जानते हैं और मेरा निवेदन है कि आप उनसे अंग्रेजी में बोलने की प्रार्थना करें।

***श्री टी॰ चनैया:** मुझे किसी भी मनचाही भाषा में बोलने का अधिकार है।

(कनाड़ी में बोलना जारी रखा)

***श्री शंकर दत्तात्रेय देव** (बम्बई: जनरल): श्रीमान् जी, हमें कम से कम यह तो बता दिया जाये कि माननीय सदस्य किस भाषा में बोल रहे हैं।

***अध्यक्ष:** मुझे यह सूचना मिली है कि वे कनाड़ी में बोल रहे हैं। *(हंसी)*

***श्री मोहनलाल सक्सेना** (संयुक्त प्रांत: जनरल): हम किस प्रकार मालूम करें कि वे कनाड़ी में बोल रहे हैं या नहीं?

***दीवान चमनलाल** (पूर्वी पंजाब: जनरल): श्रीमान् जी, एक वैधानिक आपत्ति है। क्या मेरे माननीय मित्र द्वारा दिये गये वक्तव्य का किसी समझ में आने वाली भाषा में अनुवाद करने का कोई प्रबंध है?

***अध्यक्ष:** अनुवाद का कोई प्रबंध नहीं है। यदि कोई माननीय सदस्य अपनी मातृभाषा में बोलना पसंद करता है, मैं उसे नहीं रोक सकता हूं। अन्य सदस्यों की समझ में वह वक्तव्य नहीं आता और वक्ता भी यहां उपस्थित अधिकांश सदस्यों को प्रभावित नहीं कर सकता है। अत: हानि वक्ता को ही अधिक है अपेक्षाकृत सदस्यों के जो उसको नहीं समझ सकते। मैं किसी सदस्य के सामने बाधा उत्पन्न करना नहीं चाहता हूं जोकि अपनी मातृभाषा में बोलना चाहता है।

***श्री टी॰ चनैया:** धन्यवाद, अध्यक्ष महोदय! (कनाड़ी में भाषण जारी)

***श्री एम॰एस॰ अणे:** श्रीमान् जी, एक वैधानिक आपत्ति है। क्या आप यह जान सकते हैं कि वे संगत बोल रहे हैं अथवा असंगत?

***अध्यक्ष:** मैं यह नहीं जान सकता हूं कि वे संगत बोल रहे हैं अथवा असंगत। यह तीसरा अवसर है जबकि एक सज्जन ऐसी भाषा में बोले हैं जिसे यहां अधिकांश सदस्य नहीं समझ सके। मैंने एक सदस्य को तेलगू में बोलने तथा दूसरे सदस्य को तमिल में बोलने की आज्ञा दी थी और मैंने सोचा कि मैं किसी सदस्य को कनाड़ी में बोलने से नहीं रोक सकता हूं। मैं जानता हूं कि वे स्वयं अनुभव करेंगे कि जो वक्तव्य वे दे रहे हैं उसे अधिकांश सदस्य नहीं समझ रहे हैं और यह भी अनुभव करेंगे कि वे अपना समय व्यर्थ खो रहे हैं। अत: मैं उनसे निवेदन करूंगा कि वे अपने वक्तव्य को संक्षिप्त करें।

***श्री बी॰जी॰ खेर** (बम्बई: जनरल): वे रियासतों पर और केन्द्र पर बोल रहे हैं। मैं निवेदन करता हूं कि जिस विषय पर हम वाद-विवाद कर रहे हैं, उसका इससे कोई संबंध नहीं है।

***दीवान चमनलाल:** इस परिषद् के कार्य-विधि संबंधी तथा स्थायी आज्ञाओं के नियम 59 बताता है: ''परिषद् में कार्यवाही हिन्दुस्तानी, हिन्दी या उर्दू या अंग्रेजी में होगी बशर्ते कि प्रधान किसी सदस्य को, जो इन दोनों भाषाओं में से किसी में भी अपने विचार पर्याप्त रूप में प्रकट नहीं कर सकता, अपनी मातृभाषा में परिषद् में भाषण देने के लिये आज्ञा दे दे।'' मैं निवेदन करता हूं कि इस समय माननीय सदस्य इस नियम का लाभ उठा रहे हैं और उनको इस नियम से लाभ उठाने की कोई आवश्यकता नहीं है। वे अंग्रेजी जानते हैं। उन्होंने अभी पर्याप्त रूप में अंग्रेजी में अपने विचार प्रकट किये हैं। अत: उनको अपनी मातृभाषा में बोलने का अवसर नहीं दिया जाना चाहिये।

***अध्यक्ष:** यह नियम अन्य व्यवस्थापिकाओं में भी पाया जाता है और वहां यद्यपि सदस्य अंग्रेजी भाषा में अपने आप को व्यक्त कर सकता है फिर भी सदस्यों को अपनी मातृभाषा में बोलने की इजाजत दी जाती है। अत: मैं उन्हें उनकी मातृभाषा में बोलने की आज्ञा देता हूं। फिर भी मैं उनसे निवेदन करूंगा कि वे अपने भाषण को संक्षिप्त करें।

***श्री राजकृष्ण बोस** (उड़ीसा: जनरल): उस हालत में जब कि आप सदस्यों को उस भाषा में बोलने की इजाजत देते हैं जिसे अधिकांश सदस्य नहीं समझ सकते हैं, तो कम से कम अध्यक्ष को अपने पास एक द्विभाषिया रखना चाहिये जिससे कि वे यह जान सकें कि सदस्य क्या बोल रहा है।

***श्री टी॰ चनैया:** (अपना भाषण कनाड़ी में समाप्त किया।)

***अध्यक्ष:** हमने काफी वाद-विवाद कर लिया है। मैं अब श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर से निवेदन करता हूं कि यदि वे चाहें तो उत्तर दें।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान् जी, दो संशोधन जो सभा के समक्ष विचारार्थ उपस्थित हैं, वे सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य और मि॰ नजीरुद्दीन अहमद के हैं। मेरे ख्याल से सार रूप में दोनों लगभग एक-सा ही वाद हेतु उपस्थित करते हैं। जहां तक संशोधन के औचित्य से संबंध है, उन पर वक्ताओं

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

द्वारा यथेष्ठ प्रकाश डाला जा चुका है जिन्होंने मेरे सामने विषय को लिया। जो वाद-विवाद हो चुका है उसमें मैं कोई तत्व की बात नहीं बढ़ाना चाहता हूं। हमारे विचार के लिये मुख्य बात यह है कि अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों, संघों अथवा अन्य संस्थाओं में संघीय व्यवस्थापिका को उन सम्मेलनों तथा संघों में केवल भाग लेने का अधिकार ही नहीं वरन् उनमें किये गये निर्णयों को क्रियान्वित करने के भी अधिकार होने चाहियें अथवा नहीं।

श्रीमान् जी, जैसा कि बताया गया है, अंतर्राष्ट्रीय जगत में भारत ने जो नई स्थिति ग्रहण की है उस पर विचार करते हुये यह बहुत आवश्यक है कि यह देश उन सम्मेलनों तथा संघों में एक स्वर में बोले और यदि यह भी स्वीकार किया जाता है कि भारत वहां किये गये निर्णयों में सहयोगी हो तो मेरे विचार से तो यह आवश्यक है कि एकरूप होकर भारत को इन निर्णयों को क्रियान्वित करने का कदम उठाना चाहिये। साधारण रूप में, मैं सरदार पनिक्कर के तर्क से सहमत हूं कि संघीय व्यवस्थापिका को इन सम्मेलनों में किये गये निर्णयों के संबंध में कानून निर्माण करने के अपने अधिकारों को संघीय विषय-सूची या सहगामी विषय सूची में केवल सम्मिलित करने के लिये विदित कर लेना चाहिये। बात ऐसी ही है, परन्तु हमें यह भी याद रखना चाहिये कि हम इन सम्मेलनों में उस संघ की ओर से सम्मिलित नहीं होते हैं जिसका संघीय प्रदेशों से कुछ भेद-विभेद रखा गया है। हम उन सम्मेलनों में समस्त भारत की ओर से सम्मिलित होते हैं अर्थात् प्रदेशों तथा संघ का संयुक्त भारत—और यदि हमारे ऊपर उन सम्मेलनों में किये गये निर्णयों को स्वीकार करने का जोर डाला जाता है तो ठीक बात केवल यही है कि हम उन सम्मेलनों में जिन निर्णयों से सहमत होते हैं, उन्हें क्रियान्वित कर सकें। हमारे उन निर्णयों को स्वीकार कर घर आने से कोई लाभ नहीं जब कि हम केन्द्र में होते हुये उनको क्रियान्वित नहीं कर सकते तथा हम उनको विभिन्न प्रादेशिक इकाइयों को भेजें और वे उन पर अपना निर्णय करें कि उन निर्णय को क्रियान्वित किया जाये या न किया जाये। श्रीमान् जी, इससे अंतर्राष्ट्रीय जगत में भारत की एक देश के रूप में बड़ी भद्दी स्थिति होगी। यह बात सच है कि जब हम इन सम्मेलनों में उन निर्णयों को निश्चित करते हैं तो वे विभिन्न महत्त्व लिये हुये होते हैं। बहुत से सम्मेलनों में केवल पवित्र निर्णय ही किये जाते हैं, परन्तु बहुतों में मानव स्वतंत्रता घोषित की जाती है, तथा ऐसे ही और निर्णय किये जाते हैं। हमारे लिये उन सम्मेलनों में स्वीकार किये गये प्रत्येक प्रस्ताव

को क्रियान्वित करने का प्रयत्न करना कठिन होगा। परन्तु इस मद का वास्तविक अर्थ क्या है? इसका अर्थ यह नहीं है कि प्रत्येक निर्णय जो कि उन सम्मेलनों में किया जाता है, क्रियान्वित होना चाहिये। इसका केवल यह अर्थ है कि यदि यह निश्चय किया जाता है कि उन निर्णयों को क्रियान्वित किया जाना चाहिये तो संघ को उनकी व्यवस्था करने का अधिकार है। यही पूरी बात है। अतः श्रीमान् जी, इस दृष्टिकोण से इस पर विचार करते हुये मुझे यह प्रतीत होता है कि यदि सभा ऐसे सम्मेलनों में भाग लेने की व्यवस्था करती है तो ऐसे निर्णयों के लिये जो क्रियान्वित करने योग्य हैं, क्रियान्वित करने के अधिकार देने के लिये भी उसे सहमत होना चाहिये।

एक और बात है जिसको मैं कहना चाहूंगा। इस मद के संबंध में जो व्यवस्था सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य ने पेश की है वह वास्तव में ऐसी चीज नहीं है जिसे स्वीकार किया जाये। मेरे विचार से वास्तव में यदि उस प्रश्न पर वाद-विवाद करना ही है तो जब कि विधान का मूल विषय सभा के समक्ष आये, उस समय उनको संशोधन की सूचना देकर अपने उद्देश्य को पूरा करने के लिये भारतीय सरकार के एक्ट की धारा 106 के समान किसी विशिष्ट धारा बनाने के लिये निवेदन करना चाहिये। उन मदों की सूची के केवल विषय गणना में इस प्रकार की व्यवस्था का रखना जिनके लिये कि संघीय व्यवस्थापिका को कानून निर्माण करने का अधिकार है, मेरी राय में विषय के प्रस्तुत करने की उपयुक्त विधि नहीं है। मुझे और अधिक कुछ नहीं कहना है।

***अध्यक्षः** अब मैं संशोधनों पर मत लूंगा। पहला संशोधन सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य द्वारा पेश किया गया है।

प्रश्न यह है किः

''निम्न पद 14 के अंत में जोड़ दिया जायेः

'बशर्ते कि केवल इस मद को सूची में शामिल कर लेने के आधार पर किसी प्रान्त या संघ में सम्मिलित रियासत के लिये इन निर्णयों को क्रियान्वित करने का अधिकार संघ को नहीं होगा जब तक कि प्रान्त या रियासत की पूर्व स्वीकृति न हो'।''

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** इसके पश्चात् मि॰ नजीरुद्दीन अहमद का संशोधन है।

प्रश्न यह है कि:

''मद 14 के अंत में निम्न जोड़ दिया जाये:

'कानून निर्माण की अपनी क्षमता के अंतर्गत विषयों पर तथा प्रान्त अथवा रियासत पर प्रभाव डालने वाले अन्य विषयों पर ऐसे विषयों की स्वीकृति से'।''

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** मैं मूल मद 14 पर राय लूंगा।

प्रश्न यह है कि:

मद 14 स्वीकार की जाये।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

मद 15

***अध्यक्षः** मद 15 पर कोई भी संशोधन नहीं है। इसलिये मैं उस पर सीधे मत लेता हूं।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 16

***अध्यक्षः** सर ए॰ रामास्वामी मुदालियर, सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य, श्री एम॰ए॰ श्रीनिवास तथा श्री सी॰एस॰ वेंकटाचार्य द्वारा संशोधन की सूचना है।

***सर वी॰टी॰ कृष्णमाचारी:** मैं अपने संशोधन को वापस लेता हूं।

***श्री एम॰ माधवरावः** मैं भी अपने संशोधन को वापस लेता हूं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान् जी, मैं निवेदन करता हूं कि मद 16 के अंत में निम्न जोड़ दिया जाये:

''कानून निर्माण करने की क्षमता के अंतर्गत विषयों पर तथा प्रान्त या रियासत पर प्रभाव डालने वाले अन्य विषयों में ऐसे प्रदेशों की आवश्यक स्वीकृति द्वारा।''

श्रीमान् जी, इस विषय पर पूर्ण वाद-विवाद हो चुका है और जो कुछ कहा जा चुका है उसको मैं दुहराना नहीं चाहता हूं। मैं एक बात कहने की प्रार्थना करता हूं कि वाक्य खंड 14 के वाद-विवाद में श्री मुंशी ने अपनी बात को स्पष्ट कर दिया जब उन्होंने यह कहा कि प्रदेशों तथा रियासतों से परामर्श किये बिना केन्द्र द्वारा कोई भी कार्यवाही नहीं की जायेगी और केन्द्र उनकी पीठ पीछे कोई भी काम नहीं करेगा। यह एक बहुत अप्रत्यक्ष रियायत है कि प्रांत तथा रियासतें परामर्श किये जाने के अधिकारी हैं। इसके बाद श्री आयंगर ने भी उत्तर में कहा था। मेरे ख्याल से वह मद 14 के संशोधन की व्यवस्था के संबंध में था कि इस मद के लिये यह उपयुक्त स्थान नहीं है, यह सुझाते हुये, मैंने उनको सही-सही समझा कि उसी चीज को किसी उचित रूप में स्वयं विधान में रखा जा सकता है। इन दो प्रमुख व्यक्तियों के सभा में ये भाषण मुझे यह संकेत करते हैं कि उन्होंने भी अपनी स्थिति की कठिनाई का आभास किया। वास्तव में प्रश्न केवल यह है कि श्री आयंगर तथा मुंशी केन्द्र में बड़े प्रभावशाली व्यक्ति हैं, हम यह मान लें कि वे अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन में जाते हैं और वहां वे इस बात से सहमत होते हैं कि आदमी के सब गुणों का अपहरण कर लिया जाये और प्रभावशाली व्यक्तियों में उनको बांट दिया जाये। वह आदमी कहता है ''बिना मेरी स्वीकृति के आप ऐसा नहीं कर सकते हैं।'' लेकिन प्रभावशाली व्यक्ति कहते हैं, ''यदि तुम हमारे अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों के शुभ-कार्यों में बाधा डालते हो तो हम ख्याल करते हैं कि तुम हमें रोकते हो।'' ठीक यही दशा है। चाहे इस कार्य के पीछे सद्भावना हो, फिर भी यह प्रान्तों अथवा रियासतों के अधिकारों का प्रश्न है। प्रश्न यह है कि क्या आपको यह आज्ञा मिल सकती है, चाहे अप्रत्यक्ष रूप में हो चाहे वह समस्त भारत के लाभ के लिये हो, कि आप इस प्रकार के आदेशों द्वारा प्रान्तों तथा रियासतों के व्यवस्था संबंधी संरक्षणों को सीमित करें? मैं निवेदन करता हूं कि वाद-विवाद ने इस कठिनाई का उत्तर नहीं दिया है जिसे मैं महसूस कर रहा हूं। वास्तव में अपनी कानूनी क्षमता के अंतर्गत सूची (2) में दिये गये एकमात्र प्रान्तीय न्यायाधिकार क्षेत्र के अंतर्गत विषयों पर प्रान्त का अधिकार है और रियासतों का उन विषयों पर अधिकार है जिनको उन्होंने सौंपा नहीं है। प्रश्न यह है कि क्या केन्द्र को उन एकमात्र अधिकारों को दबा लेने की अप्रत्यक्ष रूप से आज्ञा दी जानी चाहिये? इस प्रकार तो व्यवस्था संबंधी सूची में समस्त भेद-विभेदों को रद्द कर दिया जायेगा। सिद्धांत के प्रश्न पर मेरे विचार से ऐसा नहीं होने देना चाहिये, चाहे भावना कितनी ही उच्च क्यों न हो। जो कुछ मैं चाहता हूं वह यह है कि विषय-सूची का इस प्रकार संशोधन किया जाये या विधान के अंतर्गत कुछ यथेष्ठ संरक्षणों का समावेश किया जाना चाहिये कि

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में जाने से पहले प्रान्तों या रियासतों से वाद-विवाद कर लिया जाये और उनकी स्वीकृति प्राप्त कर ली जाये और तब केन्द्र ऐसे सम्मेलनों में अपने प्रतिनिधि भेजे। इस विधि के बिना वहां जाना मूर्खतापूर्ण है। यह मुझे बिल्कुल सरल तथा न्याययुक्त प्रतीत होता है। मैं नहीं समझता कि केन्द्र की निपुणता तथा उसके यश के नाम पर इस अधिकार अपहरण का सहारा लिया जाये। मैं समझता हूं कि जो प्रश्न मैंने उठाया है वह ठोस वैधानिक तर्क पर आश्रित है और प्रदेशों के एकमात्र अधिकारों के संबंध में उनकी पीठ पीछे केन्द्र द्वारा किसी कार्यवाही के किये जाने के विरोध में कोई व्यवस्था होनी चाहिये।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर** (मद्रास: जनरल): यद्यपि मद 14 पर सभा द्वारा निर्णय से मद 16 पर कोई भी वक्तव्य अनावश्यक हो जाता है, फिर भी इस कथन को विचार में रखते हुये कि जब तक संधि या समझौता प्रांत द्वारा क्रियान्वित न किया जाये तब तक वह संधि या समझौता स्वीकृत नहीं माना जाना चाहिये तथा एक ऐसा विचार भी रखा गया है कि भारतीय सरकार के एक्ट की धारा 106 के समान विधान में पर्याप्त व्यवस्था रख दी जाये, मैं कुछ शब्द कहना चाहूंगा। श्रीमान जी, मैं यह निवेदन करता हूं कि जैसा सर बी॰एल॰ मित्तर द्वारा बताया गया है कि भारतीय सरकार के एक्ट की धारा 106 के निर्माण करने के कारण अब वर्तमान नहीं हैं और विदेशों से जो संधियां तथा समझौते किये जाते हैं, उनको क्रियान्वित करने के अधिकार केन्द्रीय व्यवस्थापिका को होने चाहियें। इस प्रकार की व्यवस्था में कोई शोभनीय बात नहीं है। प्रत्येक संघ-विधान में, चाहे केन्द्र तथा प्रदेशों में अधिकारों का कैसा ही बंटवारा हो, इस बात का ध्यान न करते हुये कि संधि उस अधिकार का अपहरण करेगी जो कि प्रान्तीय अधिकार के नाम से है, केन्द्र को उस संधि के क्रियान्वित करने का अधिकार है, इस ओर ध्यान किये बिना भी कि ऐसी संधियों का विषय प्रान्तों के अधिकार में होना चाहिये। मैं केवल थोड़े से उदाहरण दूंगा। अमेरिका विधान में भी केन्द्र तथा प्रदेशों में अधिकारों का बंटवारा है। अवशिष्ट अधिकार प्रदेशों को हैं, परन्तु फिर भी यह सबने स्वीकार किया है कि यदि संधि करने के अधिकारों के प्रयोग करने में अमेरिका की केंद्रीय सरकार यदि किसी विदेशी राज्य से संधि कर लेती है तो वह संधि प्रदेशों को भी मान्य होगी तथा उन पर लागू होगी, इस बात का ख्याल किये बिना कि संधि का विषय प्रदेशों के अधिकारों के अंतर्गत था। यह सच है कि अमेरिका के विधान की व्यवस्था तो यहां तक कहती है कि ऐसी संधि देश का उच्च कानून होगा। अमेरिका में यह स्थिति है।

आस्ट्रेलिया में भी अवशिष्ट अधिकार प्रदेशों को हैं और केन्द्र के अधिकार कुछ विशिष्ट विषयों पर हैं। फिर भी यदि केन्द्र विदेशी विभाग के अंतर्गत अपने अधिकारों को प्रयोग में लाते हुये किसी विदेशी राज्य से संधि या समझौता कर लेता है तो वह संधि प्रदेशों पर अवश्य लागू होगी। उस संधि या संधि को क्रियान्वित करने वाले कानून के विरुद्ध इस आधार पर किसी साधारण परिस्थितियों में यह संधि करना प्रदेशों के अधिकार-क्षेत्र में था, कोई कार्यवाही करने का प्रदेशों को अधिकार नहीं है।

कनाडा में जुडीशियल कमेटी के अपीलों के फैसलों में बड़ा तीव्र मतभेद रहा। परन्तु कनाडा का प्रभावशाली तथा शक्तिशाली राष्ट्रीय मत इस विचार का है कि संघ द्वारा किसी अंतर्राष्ट्रीय संस्था के सदस्य होने के नाते जो संधियां की जाती हैं उनको क्रियान्वित करने का केन्द्र को अधिकार होना चाहिये। प्रान्तों को यह कहने का कोई अधिकार नहीं है कि क्योंकि ये विशेष विषय साधारण परिस्थितियों में प्रान्त के अधिकार के अंतर्गत हैं, इसलिये प्रान्तों पर ये संधियां लागू नहीं हो सकती हैं। जहां तक निर्णयों (फैसलों) का संबंध है, इसमें संदेह नहीं कि उनमें मतभेद है। लेकिन मैंने यह भी कह दिया है कि कनाडा का प्रभावशाली तथा शक्तिशाली राष्ट्रीय मत ऐसी संधि को बल देने के पक्ष में है।

इन परिस्थितियों में भारत की अनोखी प्रकृति पर विचार करते हुये, अनेकों रियासतों के अस्तित्व को तथा अनेकों प्रदेशों को जो संघ का निर्माण करते हैं, दृष्टि में रखते हुये इस देश को संधि करने का तथा उस संधि को क्रियान्वित करने का अधिकार होना चाहिये। लेकिन हमारे राजनीतिज्ञों को प्रतिबंध रहित, संधि करने के लिये सचेत रहना चाहिये। उनको कोई आवश्यक अधिकार सुरक्षित रखना चाहिये और उनको इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि जब तक हमारी व्यवस्थापिका संधि को क्रियान्वित नहीं करती वह लागू नहीं की जायेगी। वे कोई अन्य अधिकार सुरक्षित रख सकते हैं जो प्रान्तों तथा केन्द्रों की सरकारों से परामर्श करने के संबंध में हों। अन्यथा किसी संधि प्रबंध में केन्द्र अपने आपको मूर्ख बनायेगा। धारा 106 के बहुधा हवाले दिये गये हैं, उस पर विचार करते हुये मैं यह समीक्षा कर रहा हूं। इस मद के रखने के पक्ष में, मैं इस आधार को ग्रहण करता हूं कि धारा 106 जैसी कोई धारा नहीं होगी। संधियों के अलावा अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों या जिसे कि एक प्रकार के अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों के समझौते कहा जा सकता है, उनको किसी अन्य आधार पर लिया जा सकता है।

***श्री एम॰ अनन्तशयनम् आयंगरः** श्रीमान् जी, मैं भी इसी विचार का था कि भारत सरकार के एक्ट की धारा 106 के समान एक व्यवस्था बना देनी चाहिये;

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

लेकिन पुनः विचार करने पर मैंने मालूम किया कि उसके द्वारा देश पर अनेकों कष्ट आ पड़ेंगे, वे हमारे मामले को अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में नहीं रख सकेंगे और यहां तक कि उन विदेशों के संबंध में भी जिनसे हमने संधियां तथा समझौते कर लिये हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि प्रान्तों या प्रादेशिक इकाइयों की स्वीकृति लिये बिना या उनसे परामर्श किये बिना इस विषय में केन्द्र को स्वतंत्रता देने में खतरा है। प्रदेशों की संख्या बहुत बड़ी है और यह संभव नहीं हो सकता कि निर्णयों को क्रियान्वित करने के पूर्व उनकी स्वीकृति प्राप्त की जा सके या हरएक से परामर्श किया जा सके। चित्र के दो पहलू हैं। मध्यमार्ग का सदैव अनुकरण करना चाहिये और वह सम्मेलन के तरीके पर किया जा सकता है।

मुझे मालूम है, श्रीमान् जी, कि समस्त सधियां तथा समझौते, उनके अतिरिक्त जो कि राजनैतिक विषयों पर विदेशों से किये जाते हैं, और सब अन्य समझौते, व्यापार संबंधी समझौते तथा अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों द्वारा किये गये निर्णय क्रियान्वित करने के पूर्व केन्द्रीय व्यवस्थापिका के सामने रखे जाते हैं और उसकी स्वीकृति या पुष्टि के बिना उनको कानून का श्रेय प्राप्त नहीं होता है। अतः कम से कम इस देश में एक ऐसी व्यवस्थापिका है जो इन निर्णयों को स्वीकार करती है और उनको कानून का बल या श्रेय देती है। प्रश्न केवल यही है कि प्रान्तीय विषयों के संबंध में प्रान्तीय व्यवस्थापिका की भी सुनी जाये या नहीं। इस बात पर विचार करते हुये कि प्रदेशों की संख्या बहुत बड़ी है यह असंभव होगा। जिनेवा में खाद्य तथा कृषि का एक अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन है। मैं ठीक-ठीक जानता हूं कि प्रान्तों से उन प्रतिनिधियों के बारे में जो वहां जायेंगे तथा उनको क्या आदेश होने चाहियें इसके बारे में परामर्श नहीं किया गया है, कम से कम एक प्रान्त से तो परामर्श नहीं लिया गया। यदि प्रान्तों के ऊपर प्रान्तों की स्वीकृति के बिना तथा प्रान्तों से खास आदेश लिये बिना कि उन प्रतिनिधियों को इन सम्मेलनों में किन-किन बातों पर जोर देना है इन अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में प्रतिनिधि भेजे जाते हैं तो उनकी (प्रान्तों) आरम्भ तथा अंत दोनों में अवज्ञा करनी है,—आरंभ में प्रतिनिधि भेजने में और अन्त में निर्णय करने में। यह कठिनाई केवल प्रान्तीय विषयों के संबंध में उत्पन्न होती है। प्रतिनिधियों के चुनाव करने के विषय में तथा उनको आदेश देने में और अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में खास निर्णयों के करने के पश्चात् प्रतिनिधियों के यहां आने पर प्रान्तों या इकाइयों को इस विषय में कुछ भी कहने का अधिकार नहीं देने में यदि प्रान्तों के साथ पूर्ण शिष्टता के साथ बर्ताव नहीं किया जाता तो यह खेदजनक विषय है। मैं केन्द्र को असमर्थ बनाने तथा निर्णयों के क्रियान्वित

करने में बाधा डालने के लिये किसी कानूनी व्यवस्था को नहीं चाहता हूं। यदि ऐसी कोई व्यवस्था हुई तो केन्द्र संसार के सामने अपने आपको मूर्ख सिद्ध करेगा और उस सीमा तक, मैं मानता हूं, इस संशोधन को नहीं ले जाना चाहिये।

परन्तु व्यवहार में जो कुछ होना चाहिये, वह यह है। उन विषयों के लिये जिन पर अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन बहुधा होते हैं, स्वास्थ्य, शिक्षा, श्रम तथा अन्य विषयों के लिये एक अंतर्राष्ट्रीय कौंसिल या अखिल भारतीय कौंसिल स्थापित की जानी चाहिये। जब कभी प्रतिनिधियों को सम्मेलनों में जाने के लिये कहा जाये, इस कौंसिल की राय ली जाये। प्रतिनिधियों के चुनाव करने में भी इससे परामर्श करना चाहिये। प्रतिनिधियों को इससे परामर्श करना चाहिये और आदेश प्राप्त करने चाहियें कि वे एक स्वर में केन्द्रीय सरकार की ओर से तथा प्रान्तीय सरकार की ओर से क्या कहें। लौटने पर वे इस अन्तर्प्रान्तीय या अखिल भारतीय कौंसिल को रिपोर्ट करें और उस पर निर्णय करें। जब निर्णय हो जाये तो उस निर्णय को केन्द्र द्वारा क्रियान्वित किया जाये, यह उन अनेकों असुविधाओं को दूर कर देगा जो कि प्रदेशों की स्वीकृति प्राप्त करने के लिये कानूनी व्यवस्था बना देने से उत्पन्न होंगी। यह वांछनीय नहीं है कि प्रदेशों तथा कई प्रान्तों की सरकारों की अवज्ञा की जाये। मध्यवर्ती मार्ग का अनुसरण करना चाहिये। परन्तु वह कानूनी व्यवस्था द्वारा न हो, वह सम्मेलन द्वारा हो। इन कारणों से मैं संशोधन के पक्ष में नहीं हूं। न मैं इस पक्ष में हूं कि भारत सरकार के एक्ट की धारा 106 के समान एक व्यवस्था का समावेश विधान में कर दिया जाये। परन्तु केन्द्र इस बात को ध्यान में रखे कि अनेकों मदों तथा विषयों के संबंध में, जो कि इन अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में आते हैं और जो कि प्रान्तीय सूची में हैं, शीघ्र ही एक अखिल भारतीय कौंसिल स्थापित कर दी जाये और प्रतिनिधि भेजने के विषय में, आदेश देने के विषय में और जबकि निर्णय कर लिये जायें तो पूर्व इसके कि वे केन्द्रीय व्यवस्थापिका द्वारा पुष्ट किये जायें उनको क्रियान्वित करने के विषय में इस कौंसिल से परामर्श किया जाये।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान् जी, सभा में संशोधन पर जो कुछ कहा जा सकता था वह संशोधन पर वाद-विवाद करते समय तथा मद 14 पर वाद-विवाद करते समय कहा जा चुका है। मैं केवल एक प्रश्न लेना चाहता हूं जिसे श्री नजीरुद्दीन अहमद ने उठाया है। वह यह है। उन्होंने चाहा कि यदि मद के संबंध में यह संशोधन स्वीकृत नहीं होता तो विधान में इस संशोधन

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

के सार को लेते हुये कोई अन्य व्यवस्था बना देनी चाहिये। श्रीमान् जी, मद 14 पर वाद-विवाद करते समय मैंने यह विषय लिया था कि इस मद पर जो संशोधन पेश किया गया है उस पर विचार करना ही है तो उसका सार रूप जो इस मद के सिलसिले में न हो, संशोधन के रूप में विधान में लाया जा सकता है जब वह सभा के समक्ष विचारार्थ उपस्थित हो। मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि मेरे उस कथन से केवल सही पद्धति की ओर संकेत करने से आशय था जिसका अनुसरण किया जाना चाहिये। मुझे आश्चर्य है, मैं सोचता रहा कि कुछ सदस्यों के मन में ऐसी भावना है कि मैंने स्वयं विधान में धारा 106 के समान किसी व्यवस्था के समावेश करने का सुझाव रखा। मेरा यह आशय नहीं था। मैंने केवल यह कहा था कि यदि ऐसा कुछ हुआ तो यह विधान के मूल विषय के हवाले द्वारा होना चाहिये। विधान में इस प्रकार की किसी व्यवस्था के रखे जाने के औचित्य पर मुझे अपने मन में किंचितमात्र भी संदेह नहीं है कि जहां तक मद 16 का संबंध है, इस देश की परिस्थितियों में इस प्रकार के आदेश की कोई बात नहीं है। इस विषय पर श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर के प्रश्न से मैं सहमत हूं। ऐसा होने पर मुझे भय है कि मुझे मि॰ नजीरुद्दीन अहमद के संशोधन का विरोध करना चाहिये और मैं उनको इस बात की आशा नहीं दिला सकता हूं कि उनके यहां पेश किये गये संशोधन के समान या भारत सरकार के 1935 ई॰ एक्ट की धारा 106 के समान विधान के मूल विषय तक मैं किसी संशोधन को स्वीकार करने में मेरी सम्मति होगी।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधन पर मत लूंगा।

विषय यह है कि:

''मद 16 के अंत में निम्न जोड़ दिया जाये:

'कानून निर्माण करने की क्षमता के अंतर्गत विषयों पर तथा प्रान्त या रियासत पर प्रभाव डालने वाले अन्य विषयों में ऐसे प्रदेशों की आवश्यक स्वीकृति द्वारा'।''

संशोधन अस्वीकृत किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न है कि:

''मद 16 स्वीकार की जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 17

***अध्यक्षः** मुझे दो संशोधनों की सूचना मिली है और दोनों इस विषय के हैं कि इस मद को हटा दिया जाये।

***सर वी॰टी॰ कृष्णमाचारीः** मैं अपने संशोधन को पेश नहीं कर रहा हूं।

***मि. नजीरुद्दीन अहमदः** मैं अपने संशोधन को पेश नहीं कर रहा हूं।

***अध्यक्षः** प्रश्न है किः

''मद 17 को स्वीकार किया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकृत किया गया।

मद 18

***अध्यक्षः** श्री माधवराव!

***श्री एन॰ माधवरावः** मैं अपना संशोधन पेश नहीं कर रहा हूं।

***श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरीः** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव रखता हूं किः

''मद 18 के अंत में निम्न को जोड़ दिया जायेः

'संघ द्वारा लिये गये।' ''

इस संशोधन का उद्देश्य यह है कि यह स्थिति स्पष्ट हो जाये कि इस मद में जिन विदेशी कर्जों का हवाला दिया है, वे केवल संघ द्वारा लिये गये कर्ज होंगे या इससे यह मंशा है कि प्रदेशों, गैर सरकारी व्यापारिक केन्द्रों या व्यक्तियों को विदेशों से कर्ज लेने का कोई अधिकार नहीं होगा। मद, जिस रूप में है, इस बात को स्पष्ट नहीं करता है। मैं कृतज्ञ होऊंगा कि यदि इस मद के वास्तविक आशय पर कुछ प्रकाश डाला जाये।

***श्री ए॰पी॰ पट्टानी** (पश्चिमी भारतीय रियासतों का समूह): अध्यक्ष महोदय, जहां तक मैं समझ सकता हूं जो संशोधन पेश किया गया है वह यह सुझाव रखता है कि केवल संघ या केन्द्रीय सरकार ही नहीं वरन् प्रदेश भी विदेशी कर्ज ले सकें। मेरे ख्याल से प्रदेशों को यह अधिकार देना बड़ा खतरनाक होगा, विशेषकर संघ-सूची के उस मद के होते हुये जिसके द्वारा कि संघ-सरकार ने देश के किसी भाग में गंभीर आर्थिक संकट का सामना करने का उत्तरदायित्व ले लिया है। यदि किसी प्रान्त या रियासत को विदेशों से कर्ज ले लेने दिया जाता है तथा संघ के लिये आर्थिक कठिनाइयां उत्पन्न करने दी जाती हैं तो संघ सरकार पर बड़े संकट पड़ेंगे। मैं इसीलिये संशोधनकर्ता से निवेदन करूंगा कि वे इसे कृपया वापस ले लें।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान् जी, संशोधन पेश करने वाले महोदय ने इस विशेष मद के अंतर्गत क्या क्या आता है, इस बात का स्पष्टीकरण चाहा है। ''विदेशों से कर्ज'' ये शब्द तो मेरे ख्याल से जिस आशय से रखे गये हैं उसे स्पष्ट करते ही हैं। स्पष्टतया संशोधन का उद्देश्य यह है कि संघ व्यवस्थापिका के कानून निर्माण करने के अधिकार संघ द्वारा लिये गये विदेशी कर्ज तक ही सीमित रहने चाहियें। श्रीमान् जी, मैं इस स्थिति को स्वीकार नहीं कर सकता हूं। माननीय संशोधनकर्ता इस बात का हवाला दे रहे थे कि प्रदेशों को विदेशों से कर्ज लेने की स्वतंत्रता हो। मैं नहीं समझता हूं कि केन्द्र का हवाला दिये बिना यदि प्रदेश, विदेशों से कर्ज लेता है तो केन्द्र इस बात को स्वीकार कर सकता है। यदि उसे (प्रदेश) ऐसा करना है तो उसे केन्द्र की स्वीकृति प्राप्त कर लेनी चाहिये और उसे इस प्रकार के कर्ज के लिये केन्द्र द्वारा प्राय: कार्रवाई करनी चाहिये, यदि यह आपत्तिजनक न हो। यह मद विदेशों से कर्ज लेने में संघ को पूर्ण अधिकार देने के आशय से है।

***श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी:** गैर सरकारी व्यापारिक केन्द्र या व्यक्ति के बारे में क्या है?

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** यदि संघ व्यवस्थापिका इस प्रकार के कर्जों को नियमित करना तथा उन पर प्रतिबंध लगाना आवश्यक समझती है तो उसे इसका अधिकार होगा। लेकिन इसका प्रयोग किया भी जाये या नहीं या इसका कुछ विशेष परिस्थितियों में प्रयोग किया जाये, इस विषय पर संघ-व्यवस्थापिका द्वारा ही निर्णय होगा।

***अध्यक्षः** मैं संशोधन पर मत लूंगा।

प्रश्न है कि:

''मद 18 के अंत में निम्न जोड़ दिया जाये:

'संघ द्वारा लिये गये'।''

संशोधन अस्वीकृत किया गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न है कि:

''मद 18 स्वीकार की जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 19

(श्री कृष्णमूर्ति राव ने तथा श्री कुमारदास ने अपने संशोधन पेश नहीं किये।)

***अध्यक्षः** प्रश्न है कि:

''मद 19 को स्वीकार किया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 20

***श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी** (सीमा प्रान्त, सिक्किम और कूचबिहार समूह): श्रीमान् जी, मैं प्रस्ताव रखता हूं कि:

''मद 20 के अंत में निम्न जोड़ दिया जाये:

'एक प्रदेश तथा दूसरे प्रदेश के मध्य वर्तमान समझौते के अधीन'। ''

अपराधी प्रत्यर्पण का विषय भारत सरकार के 1935 ई॰ के एक्ट मद 3 का जो कि विदेशी विभाग से संबंधित है अंश है। ठीक मद इस प्रकार है:

''विदेशी विभागः अन्य देशों से संधियां तथा समझौते क्रियान्वित करना, अपराधी प्रत्यर्पण जिसमें फौजदारी तथा दीवानी अपराधियों को भारत से बाहर अंग्रेजी सरकार के उपनिवेशों में समर्पण करना शामिल है।''

[श्री हिम्मतसिंह के. महेश्वरी]

इस व्यवस्था में, श्रीमान् जी, अपराधी प्रत्यर्पण प्रकट रूप में विदेशों से अपराधी लाने या भेजने मात्र से संबंध रखता था। वर्तमान सूची में अपराधी प्रत्यर्पण को अन्य विषयों से जो कि विदेशी विभाग के अंतर्गत है, पृथक कर दिया है। उदाहरण के लिये, विदेशी विभाग से संबंधित हमारा मद 11 है तथा विदेश संबंधी विषयों से संबंधित हमारे मद 14, 16 तथा अन्य भी हैं। अपराधी प्रत्यर्पण के विषय को एक पृथक मद के रूप में रखने में यह उलझन है कि संघ-व्यवस्थापिका को केवल विदेशों से अपराधी लाने ले जाने के संबंध में ही कानून बनाने का अधिकार नहीं होगा वरन् प्रदेशों से संबंधित विषयों में भी अर्थात् प्रदेशों परस्पर प्रदेशों अथवा रियासत और प्रान्तों या परस्पर प्रान्तों में वर्तमान समझौतों पर विरुद्ध प्रभाव पड़ेगा। मुझे विश्वस्त रूप से मालूम नहीं है कि इसको एक पृथक मद को रूप में रखने से क्या आशय है; लेकिन मैं ख्याल करता हूं कि इस विषय को संघ का विषय बनाकर रियासतों तथा प्रान्तों के परस्पर समझौतों में परिवर्तन या रद्दोबदल किया जा रहा है। कैसी भी सूरत हो मैं इस विषय पर कुछ प्रकाश डलवाना चाहूंगा।

***अध्यक्षः** क्या कोई सदस्य इस विषय पर बोलना चाहता है?

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** अध्यक्ष महोदय, मैं सोचता हूं कि एक बात को स्पष्ट करने की आवश्यकता है। अपराधी प्रत्यर्पण वह विषय है जिसे, मुझे प्रतीत होता है कि रियासतों ने अर्पण नहीं किया है। उस सूरत में यदि कानून बनाया जाता है या कोई प्रबंध संबंधी कार्यवाही की जाती है तो प्रश्न उठता है कि रियासतों से परामर्श किया जायेगा या नहीं या उनकी सम्मति ली जायेगी या नहीं। यह विषय स्पष्टीकरण चाहता है।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान् जी, मेरे विचार से भारत सरकार की संघ-सूची के अंतर्गत मदों के समूह से जो एक स्थान पर दर्ज किये गये हैं इस अपराधी प्रत्यर्पण के विषय को पृथक करने में कोई विचित्र आशय नहीं था। सच तो यह है कि यह विशेष मद इतनी उलझी हुई बातों से भरा पड़ा है कि हमने यह सोचा कि अपराधी प्रत्यर्पण के विषय को, जो स्वयं एक महत्त्वपूर्ण विषय है, सूची में अलग दर्ज किया जाये।

इस संशोधन के प्रेषक ने जो बात उठाई है तथा स्पष्टीकरण के प्रश्न पर जिसको मि॰ नजीरुद्दीन ने उठाया है, उस पर मुझे केवल यह कहना है।

साधारण रूप में अपराधी प्रत्यर्पण के प्रबंध परस्पर प्रदेशों के विषय हैं, दोनों प्रदेश विशेष रूप से अपने-अपने अधिकारों को प्रयोग में लाने के लिये स्वतंत्र हैं। ऐसे संघ भी संसार में हैं जिनमें अपराधी प्रत्यर्पण के प्रबंध संघ के अंतर्गत प्रदेशों में परस्पर पाये जाते हैं। मुझे विश्वास है कि संसार में ऐसे संघ भी हैं जहां ऐसे विषयों का प्रश्न जिनकी अपराधी प्रत्यर्पण द्वारा व्यवस्था की जानी चाहिये इतनी आसानी से हल किया जाता है जितनी आसानी से कि वह दो परस्पर स्वतंत्र प्रदेशों में अपराधी प्रत्यर्पण की व्यवस्था को विधिवत पूर्ण करने के तरीके से नहीं किया जा सकता। लेकिन चाहे यह हो चाहे वह, अपराधी प्रत्यर्पण वास्तव में दो प्रदेशों के समझौते का विषय है जो इन प्रबंधों में प्रवेश करते हैं। अपराधी प्रत्यर्पण का संघ-सूची में दाखिल करना आवश्यक रूप से उन समझौते या प्रबंधों को जिनका कि अस्तित्व है, भंग नहीं करता है। यह संभव है कि जब कानून स्वीकृत हो जाता है तो जैसा कि वर्तमान अपराधी प्रत्यर्पण संबंधी धारायें आदेश देती हैं वह भी अधिक संभव है कि प्रदेशों को परस्पर समझौते करने के आदेश दे और यदि भारत के भावी संघ के प्रदेशों में अपराधी प्रत्यर्पण के संबंध में व्यवस्था रखनी ही है तो मुझे विश्वास है कि वह कानून भी इसी प्रकार की व्यवस्था रखेगा। इस प्रकार के कानून बनाने के अधिकार को इन शब्दों द्वारा जिनको कि माननीय प्रस्तावक ने पेश किया है कि ''एक प्रदेश तथा दूसरे प्रदेश के मध्य वर्तमान समझौते के अधीन'' प्रतिबंधित करना चाहिये—यह एक ऐसा प्रश्न है जिसका मैं स्वीकृति-सूचक उत्तर नहीं दे सकता हूं। वे समझौते उन कानूनों की व्यवस्था द्वारा किये जायेंगे जो कि बनाये जायेंगे। मैं यह प्रत्याशा नहीं कर सकता हूं कि वे क्या व्यवस्थायें होंगी; वह भविष्य का विषय है। लेकिन इस बात को कि वर्तमान समझौते चालू रहें या परिवर्तित समझौते किये जायें, कानून की व्यवस्था पर छोड़ देना चाहिये जो भविष्य में बनाया जायेगा। यह मान लेना चाहिये कि जब अपराधी प्रत्यर्पण की व्यवस्था बना दी जायेगी तो अपराधी प्रत्यर्पण के प्रबंध में जो रियासतें प्रवेश करेंगी उनसे परामर्श किया जायेगा और यह साधारणतया केवल उस प्रबंध में प्रवेश करने वाली रियासतों की परस्पर स्वीकृति द्वारा ही ऐसे प्रबंध किये जा सकेंगे। बात यह है कि श्रीमान्जी, मैं निवेदन करूंगा कि माननीय प्रस्तावक महोदय अपने संशोधन पर जोर न दें।

श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी: श्रीमान् जी, मैं अपने संशोधन को वापस लेने की प्रार्थना करता हूं।

परिषद् की आज्ञा से संशोधन वापस किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न है कि मद 20 स्वीकार की जाये।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 21

***अध्यक्षः** हम मद संख्या 21 पर आते हैं। इस मद पर संशोधन की कोई सूचना नहीं है। इसलिये मैं इस पर मत लूंगा।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 22

***अध्यक्षः** मद 22!

***सर वी०टी० कृष्णमाचारीः** श्रीमान्जी, इस संशोधन के (कि मद 22 निकाल दिया जाये) रखने से यह उद्देश्य था कि इस बात का स्पष्टीकरण किया जाये कि इस मद से इस देश के नागरिकों पर जो कि अन्य देश में हैं, कानूनी अधिकार का प्रयोजन है या इसका उससे भी अधिक आशय है। इस प्रश्न का हम स्पष्टीकरण चाहते हैं।

***अध्यक्षः** दो संशोधन हैं जिनकी मुझे सूचना मिली है, दोनों एक ही प्रभाव के हैं। एक मि० नजीरुद्दीन अहमद का है और दूसरा श्री हिम्मतसिंह महेश्वरी का है।

***श्री हिम्मतसिंह के० महेश्वरीः** श्रीमान्जी, जो कुछ श्री वी०टी० कृष्णमाचार्य ने कहा है उससे अधिक मुझे कुछ नहीं कहना है।

***माननीय श्री एन० गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान्जी, सर वी०टी० कृष्णमाचार्य के प्रश्न पर मेरा उत्तर यह है कि विदेशी कानूनी अधिकार वह अधिकार है जिसका इस देश के नागरिकों पर अन्य देश में प्रयोग किया जाता है। केवल यही नहीं है। इस कानूनी अधिकार को प्रयोग में तभी लाया जा सकता है जब कि हमें उस विदेशी सरकार की स्वीकृति प्राप्त हो। अतः इस मद से वास्तविक आशय यह है कि जब हमें उस विदेशी मुल्क की उसके अंतर्गत रहने वाले अपने नागरिकों पर, कानूनी अधिकार प्रयोग में लाने की इजाजत मिल जाती है तब हम अपने उन नागरिकों के परस्पर संबंधों पर शासन करने के आशय से कानून बनायेंगे जोकि उस देश में हैं।

***सर वी॰टी॰ कृष्णमाचारी:** श्रीमान् जी, श्री गोपालस्वामी आयंगर ने जो कुछ कहा है उस पर विचार करते हुये मैं अपने संशोधन को लौटाने का निवेदन करता हूं।

परिषद् की आज्ञा से संशोधन लौटाया गया।

***अध्यक्ष:** तो मैं इस मद पर मत लेता हूं।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 23

***अध्यक्ष:** हम अब मद 23 पर आते हैं। इस मद पर कोई संशोधन नहीं है।

***श्री एम॰ अनन्तशयनम् आयंगर:** मैं केवल एक सुझाव रखना चाहता हूं। मद 23 में दिया हुआ है:

''राष्ट्रों के कानून के विरुद्ध समुद्र में बिना अधिकार के जहाज की गिरफ्तारी तथा अन्य घोर अपराध तथा वायु में घोर अपराध।''

मैं ''वायु में'' शब्दों के हटाने का सुझाव रखना चाहता हूं। अमेरिका विधान की धारा 8 के ऐसे ही मद से इस इन्द्राज को पूर्णतया हटा दिया गया था। इसमें वही मद था तथा हूबहू वही शब्द थे। लेकिन उस मद में राष्ट्रों के कानून के विरुद्ध समुद्र में बिना अधिकार के जहाज गिरफ्तार करना तथा वायु में किये जाने वाले अपराधों के लिये कोई प्रतिबंध नहीं है। राष्ट्रों के विरुद्ध समुद्र में अपराध करने अथवा वायु में अपराध करने में भेद-विभेद करने का कोई कारण नहीं है। मेरा विश्वास है कि यह शब्द असावधानी से यहां रख दिये गये हैं और हटाये जा सकते हैं और इस मद को संयुक्त राज्य अमेरिका के विधान की ऐसी ही व्यवस्था के समान बनाया जा सकता है। मैं इस सुझाव को परिषद् के सामने विचारार्थ रखता हूं।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान् जी, श्री अनन्तशयनम् आयंगर द्वारा जो बात रखी गई है उसे मैंने समझ लिया। लेकिन मुझे इस बात पर इतना विश्वास नहीं है कि हमको मेरे ख्याल से 160 वर्ष पूर्व रखी गई भाषा

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

को पूर्ण रूप से वैसा ही रखना चाहिये। इस कारण मैं उनके इस खास उद्देश्य की इस प्रकार पूर्ति करूंगा यदि वे इस मद में निम्न परिवर्तन को स्वीकार कर लें।

''राष्ट्रों के कानून के विरुद्ध समुद्र में तथा वायु में बिना अधिकार के जहाज की गिरफ्तारी तथा अन्य घोरतम अपराध।''

***श्री एम॰ अनन्तशयनम् आयंगरः** इसमें मेरी बात आ जायेगी।

***अध्यक्षः** मैं यह मान लेता हूं कि सभा श्री गोपालस्वामी आयंगर को इस मद को उस रूप में परिवर्तन करने की आज्ञा देती है जैसा कि उन्होंने अभी बताया है।

ततपश्चात् मैं इस मद को उस रूप में जिसमें कि उन्होंने अभी रखा है परिषद् के मत के लिये रखता हूं।

मद 23 संशोधित रूप में स्वीकार किया गया।

मद 24

***श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरीः** श्रीमान् जी, मैं प्रस्ताव रखता हूं कि मद 24 के स्थान में निम्न रख दिया जायेः

''संघ-प्रदेश के वर्तमान कानूनों के अधीन संघ-प्रदेशों में प्रवेश करना तथा उनसे बाहर निकलना या बाहर निकाला जाना, भारत की उन सीमाओं के बाहर तीर्थ-यात्रा में जोकि 15 अगस्त सन् 1947 ई॰ में थीं।''

श्रीमान् जी, इस संशोधन को रखने में दो उद्देश्य विचारगत हैं। पहला–कुछ प्रदेशों में विदेशियों के प्रवेश करने तथा उनकी सीमा से बाहर निकलने तथा निकाले जाने को नियमित करने वाले कुछ कानून हैं। यदि संघ इस विषय को पूर्णतया ले लेता है, अर्थात् प्रदेश के कानूनी अधिकार को बहिष्कृत करने की सीमा तक, तो प्रदेश के तात्कालिक कार्यवाही करने के अधिकार छिन जाते हैं जो कि कानून तथा व्यवस्था कायम रखने में घातक होगा। अतः श्रीमान् जी, केन्द्र को लोगों के संघ के प्रदेशों में प्रवेश करने, उनसे बाहर निकलने तथा निकाले जाने के आदेश देने के अधिकार सौंपने की कुछ भी व्यवस्था बनाई जाये तो मेरे विचार से वह

एक शर्त के अधीन होनी चाहिये कि इस विषय में संघ-प्रदेश के विवेक में बाधा नहीं डालनी चाहिये।

दूसरी बात जिसे मैं रखना चाहता हूं यह है कि पाकिस्तान में गुरुद्वारा तथा ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती की अजमेर में दरगाह के समान कुछ स्थानों को तीर्थयात्रा ऐसे विषय नहीं हैं जिन पर केन्द्र द्वारा कानून का निर्माण किये जाने की आवश्यकता हो। भारत के किसी गांव से गुरुद्वारा 10 मील की दूरी पर हो सकता है और मैं आशा करता हूं कि यह एक साधारण सी घटना होगी। बिना किसी आज्ञा या रुकावट के इस प्रकार के धार्मिक प्रयोजन से लोग एक संघ से दूसरे संघ में आते-जाते रहेंगे। इसी प्रकार मैं नहीं समझता कि पाकिस्तान में रहने वाले मुसलमानों के लिये अजमेर जैसी जगह के दर्शन करने में अड़चनें क्यों रखी जायें। अत: श्रीमान् जी, मैं आशा करता हूं कि दो बातों पर सावधानीपूर्वक विचार किया जायेगा तथा रिपोर्ट निर्माताओं का उत्तर इस विषय की इन आपत्तियों को दूर कर देगा।

***श्री मुहम्मद ताहिर** (बिहार: मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव रखता हूं कि शब्द ''भारत से बाहर के स्थानों को तीर्थयात्रायें'' को पृथक एक विशिष्ट मद यानी मद 88 या 24 (क) के रूप में रखा जाये।

श्रीमान् जी, यह एक ऐसा संशोधन है जो कि बहुत सीधा-साधा तथा निष्पाप है। श्रीमान् जी, मुझे यह प्रतीत होता है कि हमारे विधान का यह पहलू सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है, परन्तु दुर्भाग्यवश विधान में इसे बड़ा ही निम्न स्थान दिया गया है। मैं इसलिये माननीय प्रस्तावक से निवेदन करता हूं कि वे इससे उसी प्रकार सहमत हों जैसे कि मद 14 पर प्रांतीय सूची में उचित कार्यवाही की गई थी। ऐसा करने में माननीय सदस्य को कोई कठिनाई नहीं होगी क्योंकि मद 27 के संबंध में प्रांतीय सूची में हमने ऐसा किया था। भारत सरकार के एक्ट के अंतर्गत मद 26 तथा 27 के विषयों का एक में समावेश कर लिया गया है, यानी मद 27 में और वह यहां प्रांतीय सूची में पृथक कर दिया गया है। अत: मैं निवेदन करता हूं कि यदि यह विषय अर्थात् भारत से बाहर स्थानों की तीर्थयात्रायें को एक पृथक मद का रूप दिया जाता है तो कोई कठिनाई नहीं होगी। अंत में मैं निवेदन करता हूं कि मद 24 के प्रथम भाग का उस दूसरे भाग से कोई संबंध नहीं है जिसका मेरे संशोधन से संबंध है। इन शब्दों के साथ मैं माननीय प्रस्तावक से निवेदन करूंगा कि इस संशोधन को स्वीकार करने के लिये वे अपने दिल और दिमाग को और अधिक कोमल बनायें।

***श्री ए॰पी॰ पट्टानी:** अध्यक्ष महोदय, मद 14 के अंतर्गत दिये गये अधिकार, जैसा कि मैं समझता हूं, मद 21 में दिये गये अधिकारों से बहुत कुछ संबंध रखते हैं। अपने देश में विदेशियों के आवागमन को नियमित करना संघ सरकार के लिये अत्यंत आवश्यक होगा और जिस रूप में मद 24 है उसमें कुछ और बढ़ाने की मेरी इच्छा है। यह मद ''संबंध के प्रदेशों में प्रवेश, उनसे बाहर निकलना या निकाले जाने'' के संबंध में है। मेरा सुझाव केवल ''प्रवेश करने और निकाले जाने'' के विषय से संबंध रखता है। यह संभव है कि ऐसे कुछ देश के क्षेत्र या रियासतें हों जो अभी संघ में सम्मिलित नहीं हुई हैं। श्रीमान् जी, मैं निवेदन करता हूं कि श्री गोपालस्वामी आयंगर इस बात का ध्यान रखें कि ऐसी रियासतों से यदि कोई समझौता होता है तो इस प्रकार की व्यवस्था बना देनी चाहिये कि विदेशी यदि संघ के लिये अवांछनीय हैं तो या तो उनको पृथक कर दिया जाये या बाहर निकाल दिया जाये। मैं इसलिये यह कहता हूं कि पुरानी सरकार ने सर्वोच्च सत्ता के अंतर्गत भारत से उन विदेशियों को निकालने के अधिकार रखे थे जो कि भारत में रक्षित स्थान चाहते थे। सर्वोच्च सत्ता के विरुद्ध हम सदैव बहुत कुछ कहने के लिये चिंतित रहते हैं और मैं स्वयं उसे नहीं चाहता हूं। लेकिन यह एक ऐसी बात है कि अपने देश की रक्षा या उचित देखभाल के लिये अपने आप ही पैदा होती है। इसलिये मैं निवेदन करता हूं कि एक नोट लगा देना चाहिये कि उन रियासतों से, जो कि संघ में शामिल नहीं हुई हैं, किसी समझौते के करने में उन विदेशियों को संघ के प्रदेशों से बाहर निकालने के लिये ही नहीं वरन् भारत से भी बाहर निकालने की व्यवस्था होगी जोकि संघ के लिये अवांछनीय हैं।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान् जी, श्री हिम्मतसिंह के संशोधन पर मुझे अधिक नहीं कहना है लेकिन मेरे ख्याल से यह महत्त्वपूर्ण है कि ''संघ में प्रवेश करने, उससे बाहर निकलने या निकाले जाने'' के कानून बनाने के अधिकार एकमात्र केन्द्र को होने चाहियें। मुख्य कारण जिसके लिये यह आवश्यक है कि संघ पर भारत को एकरूपता बनाये रखने, आंतरिक सुरक्षा रखने, रक्षा के लिये व्यवस्था करने इत्यादि का उत्तरदायित्व है। इन गंभीर उत्तरदायित्वों के भार को वहन करने वाली संस्था को प्रदेशों में प्रवेश करने तथा उनसे बाहर निकलने को नियंत्रित करने के लिये कानून बनाने के पूर्ण अधिकार होने चाहियें। श्री पट्टानी ने मेरा ध्यान इस ओर आकर्षित किया कि यह संभव हो सकता है कि कुछ रियासतें सम्मिलित न हो सकें और उनसे कोई राजनैतिक संबंध स्थापित

करने में यह महत्त्वपूर्ण है कि इस बात का विश्वास कर लिया जाये कि इस विशेष मद में दी हुई शर्तों के समान उन पर कोई शर्त लगा दी गई है। श्रीमान् जी, मुझे विश्वास है कि वे लोग जोकि इस देश की सरकार में होंगे और जिनके ऊपर भविष्य में भारतीय रियासतों से संबंध स्थापित रखने का भार होगा, चाहे वे (रियासतें) संघ में शामिल हों अथवा न हों, इस महत्त्वपूर्ण बात का ध्यान रखेंगे और आवश्यक व्यवस्था बना लेंगे। श्रीमान् जी, दूसरा संशोधन मि॰ मुहम्मद ताहिर द्वारा पेश किया गया, इस मद को दो भागों में विभाजित करने के संबंध में है। जो कुछ उन्होंने तर्क किया है वह यह है कि भारत से बाहर के स्थानों की तीर्थयात्राओं का इस मद के शेष भाग से बहुत कुछ संबंध है। एक नैतिक आधार जिसके कारण ये दो विषय एक साथ रख दिये हैं, यह है कि भारत से बाहर तीर्थयात्राओं में एक प्रकार से अस्थायी रूप से बाहर निकलना होगा; लेकिन मैं मानता हूं कि आवश्यक रूप से यह विषय इस विशेष मद के शेष भाग के साथ नहीं रखा जाना चाहिये। मैं इसको एक पृथक मद के रूप में रखने के लिये राजी हूं यद्यपि मैं आशा करता हूं कि सभा संघ अधिकार की इस सूची के निर्माताओं को क्षमा करेगी यदि इससे 87 मदों की जोकि हैं, संख्या बढ़ जाये।

***अध्यक्षः** मैं इन दोनों संशोधनों पर मत लेता हूं–पहले एक फिर दूसरा।

***श्री मुहम्मद ताहिरः** मैं अपने संशोधन को वापस लेता हूं।

परिषद् की आज्ञा से संशोधन वापस किया गया।

***अध्यक्षः** श्री हिम्मतसिंह महेश्वरी का एक संशोधन है जो इस प्रकार है:

''संघ प्रदेश के वर्तमान कानूनों के अधीन, संघ प्रदेशों में प्रवेश करना उनसे बाहर निकलना या बाहर निकाला जाना; भारत की उन सीमाओं से बाहर तीर्थयात्रायें जोकि 15 अगसत सन् 1947 में थीं।''

मैं इस पर मत लेता हूं।

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** अब मैं मद 24 पर मत लेता हूं।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 25

***अध्यक्ष:** अब हम मद 25 को लेंगे।

(सर्वश्री आर॰के॰ सिधवा, एम॰एस॰ अणे तथा मि॰ नजीरुद्दीन अहमद ने अपने संशोधन पेश नहीं किये।)

तो फिर मद 25 पर कोई संशोधन नहीं है और मैं उस पर मत लेता हूं।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 26

***अध्यक्ष:** अब हम मद 26 को लेते हैं। श्री हिम्मतसिंह महेश्वरी का केवल एक संशोधन है।

***श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव रखता हूं कि मद 26 के अंत में निम्न शब्द जोड़ दिये जायें:

''संघ प्रदेश को चुंगी-कर लगाने तथा अपने ही सीमा प्रदेश में समय-समय पर चुंगी-कर में परिवर्तन करने के अधिकार के अधीन।''

चुंगी-कर अनेकों रियासतों में उनकी आमदनी का एक प्रमुख अंग होता है और यदि यह मंशा है कि रियासतें किसी प्रकार के चुंगी-कर को न लगायें तो मैं बिना किसी संकोच के कह सकता हूं कि रियासतों के अपने क्षेत्र में सुचारू रूप से शासन करने के अधिकार पूर्णतया लुप्त हो जायेंगे। बिना धन के कोई भी रियासत स्कूल तथा अस्पताल न चला सकेगी और यदि इस महत्त्वपूर्ण मद का लोप हो जाता है, तो मुझे भय है कि अनेकों रियासतों की आर्थिक व्यवस्था, यहां तक कि बड़ी-बड़ी रियासतों को भी प्राय: क्षीण हो जायेगी। अत: मैं आशा करता हूं कि इस संशोधन पर गंभीर विचार किया जायेगा और स्वीकार किया जायेगा।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान् जी, इस सूची में दो मद हैं जिन पर इस पेश किये गये संशोधन के सिलसिले में विचार करना आवश्यक है। प्रथम यह मद 26 है, जिस पर हम अब विचार कर रहे हैं। दूसरा मद 71

है, ''चुंगी-करमय निर्यात करके''। श्रीमान् जी, यदि संशोधन का संबंध केवल उन प्रदेशों के अपने चुंगी-कर लगाने को प्रचलित रखने के अधिकार से है, जो कि संघ के सीमा प्रदेश में स्थित हैं, तो यह विशेष संशोधन पर मद 71 के अंतर्गत विचार करना अधिक उपयुक्त होगा। श्रीमान् जी, मुझे यह कहना चाहिये कि मद 26 केवल उस कानून-निर्माण का उल्लेख करता है जिसका सीमा प्रदेश के इधर-उधर आयात तथा निर्यात कर से संबंध है। चूंकि चुंगी-कर के लगाने का एक पृथक मद है, मैं यह मानता हूं कि कोई न्यायालय इस मद 26 को चुंगी-कर को सम्मिलित न करते हुये व्याख्या करेगा यह मानते हुये कि मद 71 भी हमारी सूची में वर्तमान रहेगा। इसलिये इस आधार पर इस समय इस संशोधन पर विचार करने का प्रश्न ही नहीं उठता। श्री हिम्मतसिंह ने दूसरा वाद हेतु कुछ महत्त्वपूर्ण उठाया है और वह संघ प्रदेश का अपने ही सीमा प्रदेश में चुंगी-कर लगाने तथा समय-समय पर उसमें परिवर्तन करने के अधिकार संबंधी है। ये सीमा प्रदेश संघ के सीमा प्रदेश न हों। वे केवल परस्पर रियासतों के सीमा प्रदेश या एक रियासत और शेष भारत के सीमा प्रदेश हो सकते हैं। इन अधिकारों को प्रचलित करने के संबंध में सारी बात केन्द्र तथा केन्द्रीय प्रदेशों में आर्थिक साधनों के बंटवारे के निर्णयों पर निर्भर है। इस पर भी इस रिपोर्ट के सिलसिले में बाद में विचार किया जायेगा। किसी गलत मिथ्या धारणा को हटाने के विचार से, जो कि रियासतों के प्रतिनिधियों के मन में हो, मैं कह सकता हूं कि संघ द्वारा चुंगी-करों, सामान्य रूप से यहां तक कि परस्पर रियासतों के सीमा प्रदेश के चुंगी-करों के अधिकार ले लेने से यदि प्रदेश की आर्थिक-व्यवस्था में गड़बड़ी पैदा होती है तो उस प्रदेश को संपन्न बनाने के उत्तरदायित्व से संघ कदाचित मुख नहीं मोड़ेगा। अभी केवल इतना ही कहना पर्याप्त है। यदि इस प्रकार का कोई प्रस्ताव उस समय किया जायेगा जब कि हम आर्थिक साधनों के बंटवारे पर विचार करेंगे, तब मैं इस विशेष विषय की विशेष व्याख्या करूंगा। इस बात का विचार करते हुये मैं आशा करता हूं कि श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी अपने संशोधन पर जोर नहीं देंगे।

***श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी:** चूंकि यह विषय फिर आने को है मैं अपने संशोधन पर जोर नहीं देता हूं।

परिषद् की आज्ञा से संशोधन वापस हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न है कि:

''मद 26 स्वीकार की जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** मुझे सदस्यों से एक पत्र प्राप्त हुआ है जिसमें उन्होंने उस स्थिति पर वाद-विवाद करने के लिये अवसर चाहा है जोकि पंजाब में तथा देश के कुछ भागों में उत्पन्न हो गई है। उस पत्र में एक यह बात है कि उस कमेटी की रिपोर्ट जिसको हमने एक दिन नियुक्त किया था मुझे दे दी गई है और मैं उसे सभा के सामने उपस्थित नहीं कर रहा हूं। मैं सदस्यों को यह विश्वास दिलाना चाहता हूं कि मुझे रिपोर्ट नहीं मिली है चाहे समाचार-पत्रों में कुछ भी निकल गया हो। जैसे ही मुझे रिपोर्ट प्राप्त होगी मैं उस पर वाद-विवाद करने का अवसर सभा को दूंगा और उसके बाद हम वह कार्यवाही करेंगे जो कि रिपोर्ट के आधार पर अवश्य विचारी जायेगी।

सभा कल प्रातःकाल के दस बजे तक स्थगित की गई।

तत्पश्चात् परिषद् मंगलवार, 26 अगस्त, सन् 1947 ई० के प्रातःकाल के दस बजे तक स्थगित हुई।